सेज : एक सर्वनाशी सुनामी

लेखक

अभिजित सेनगुप्ता

अनुवाद

सुशील गुप्ता

केमिकल हब : एक ख़ामोश हत्यारा

1. पृष्ठभूमि

ख़ून में नहायी हुई गण-हत्या के बाद, प्रबल गण-आक्रोश की वजह से, फि लहाल नन्दीग्राम से क दम पीछे हटा लेने के बावजूद, राज्य सरकार केमिकल हब गढ़ने को दृढ़-संकल्प है, यह बात उसने साफ -साफ स्पष्ट कर दी है। हाँ, यह हब कहाँ बनेगा, यह क्षणिक अनिश्चयता ज रूर है। बहरहाल, अपने देश-मुँइ, जीवन-जीविका से जन-साधारण को उजाड़कर, मुट्ठी-भर लोगों के स्वार्थ के लिए, इस पूँजीवादी अप-उन्नयन को जनता कहीं भी, किसी शर्त पर स्वीकार नहीं करेगी, यह बताना व्यर्थ है। सच तो यह है कि विदेशी निवेश और निर्यात के माध्यम से साम्राज्यवादी भूमंडलीकरण की धारा में सरकार द्वारा ग्रहण किए गए विकास के नक्शे का असली लक्ष्य है अगाध लूटना। इसके लिए इन लोगों को चाहिए, बिना मूल्य की प्राकृतिक सम्पदा; सस्ती ज मीन! ये लोग अपना मूलधन, अपनी तकनीक, यहाँ तक कि ज रूरत पड़ी तो अपना कच्चा माल लेकर आएँगे, मनमानी लूट मचाएँगे, प्रकृति का ध्वंस करेंगे; परिवेश, जल, वायु, माटी, उत्पादन के लिए तमाम रसद! अंत में देश की समग्र अर्थनीति को निश्चित विपर्यय के मुँह में धकेलकर, बेझिझक वापस चले जाएँगे। पश्चिम बंगाल की सचेतन जनता यह साजिश समझती है। इसीलिए सारे अन्याय, बेईमानी, साजिश, मुँह पर ताला जड़कर मान लेने और उसे मानकर, उसी राह चलते रहने का अवसाद ख़त्म करके, धीरे-धीरे वे सभी लोग ज ोरदार प्रतिवाद, प्रतिरोध के संघर्ष में शामिल हो गए हैं। सिंगुर से लेकर नन्दीग्राम, भांगर से लेकर हरिपुर, डानकुनी से लेकर बसईपुर चारों तरफ ही यह संकेत स्पष्ट हो उठा है। अब, फट से 'लाइफ हेल' करना, जि न्दगी को नर्क बना देना, आसान नहीं होगा, राज्य सरकार यह बात समझ चुकी है और इसलिए अब नये सिरे से 'लाइफ हेल' करने के लिए, जगह के चुनाव के इरादे से, राज्य के शासक वर्ग 'होमवर्क' करने में व्यस्त हो उठे

हैं। इस मामले में बुद्ध बाबू के नेतृत्व में राज्य सरकार की दक्षता, इस हद तक प्रश्नातीत है कि इस देश में अप-उन्नयन के आधुनिक मार्ग-दर्शक की 'मनमोहनी' मूर्ति भी साफ झलक उठती है, जो यह जानकारी देती है कि 'केमिकल हब' आन्ध्र प्रदेश या गुजरात में नहीं, बंगाल में ही निर्मित होगा।

आखिर यह 'केमिकल हब' है क्या, जिसका हाथ थामकर पश्चिम बंगाल के मरी गंगा में एकदम से उन्नयन का नया ज्वार उमड़ आएगा। इसकी कोई पोशाकी संज्ञा है या नहीं, पता नहीं, व्यावहारिक संज्ञा के तौर पर यह कहा जा सकता है कि उत्पादन के लिए एक-दूसरे पर निर्भरशील, शृंखलाबद्ध रासायनिक कारखानों का उद्योग ताल्लुका ही 'केमिकल हब' कहलाता है। बहरहाल, मूल बहस इसकी संज्ञा को लेकर नहीं है, बहस है प्रदूषण, परिवेश में संतुलन और जनता की स्वास्थ्य-सुरक्षा वगैरह को लेकर। इसके साथ-साथ चंद प्रासंगिक सवाल भी उभरते हैं। यथा, वहाँ कौन-कौन सी रासायनिक सामग्री तैयार की जाएगी? किन लोगों के लिए तैयार की जाएगी? उन साम्रगियों की कितनी ज रूरत है? उत्पादन सामग्रियों के मूल भोक्ता कौन लोग हैं? अपने देश के ही लोग या अन्तर्राष्ट्रीय ख़रीदार वर्ग? अगर यह देश के लोगों के लिए है, तो भी सवाल यह उठता है कि हमारी रसायन-इस्तेमाल-नीति क्या होगी? कौन-कौन से क्षेत्र में क्या-क्या इस्तेमाल किया जाएगा? या क्या-क्या नहीं कर सकते, वगैरह-वगैरह। सच तो यह है कि रासायनिक उद्योग, अन्यान्य पाँच उद्योग जैसा नहीं है। इसका परिसर काफी विस्तृत है और इसका प्रभाव भी सुदूर प्रवासी है। इसके अलावा यह उद्योग के साथ-साथ कृषि-नीति से सीधे-सीधे जुड़ी हुई है। साथ ही इससे परिवेश-सम्बन्धी वास्तुतंत्र के बारे में भी अनेक सवाल उठते हैं। आज का रासायनिक शिल्प, सौ साल पहले की जगह पर ही नहीं खड़ा है। आज उसने अपने दायरे में विस्तार किया है। आज खाद्य-प्रक्रियाकरण, रासायनिक खाद, कीटनाशक, झाड़-झंखाड़ या फफूँदनाशक, कृषि-बीज प्रस्तुतीकरण, दवाओं, प्रसाधन, वस्त्र, निर्माण, कृत्रिम तरल पेय, प्लास्टिक, गाड़ी के टायर, साबुन वगैरह सैकड़ों पदार्थों के प्रस्तुतीकरण की परिधि बृहद् हुई है। 'केमिकल हब' में ये तमाम भिन्न-भिन्न रासायनिक उद्योगों की उत्पादन-प्रक्रिया, ऐसी कड़ी की तरह अन्तः-सम्पर्कित होती रहती है, जो उत्पादन-ख़र्च कम करते हैं और मुनाफा-वृद्धि की राह प्रशस्त करते हैं। इसके अलावा इस कि स्म का रासायनिक उद्योग-ताल्लुका स्थापित करने में, क दम-क दम पर ख़तरे हैं। जहाँ भी विराट पैमाने पर विविध ख़तरनाक यौगिक-सामग्रियाँ तैयार की जाएँगी, वहाँ से ऐसे असंख्य पदार्थ भी निर्गत होंगे, जो परिवेश के लिए, श्रमिकों के स्वास्थ्य और सुरक्षा के लिए, आस-पास के अंचलों के

विराट जनसमूह के लिए जानलेवा हो सकता है। इसके अलावा भी विराट आकार में दुर्घटनाओं की संभावना भी है, जैसी स्थिति से भोपाल को गुज रना पड़ा। ऐसी पृष्ठभूमि में अगर उत्पादित सामग्रियों का निर्यात ही होता रहा, तो हम सब यह अतिरिक्त जोखिम उठाएँगे या नहीं, इस बारे में भी सोचना होगा।

सिफ ि रासायनिक उद्योग ही नहीं बिजली, जल-आपूर्ति, गोदामघर, टैंकर, मरम्मती उद्योग, जो दोनों ही उद्योग-क्षेत्र में सप्लाई और परिवहन-सम्बन्धी ख़र्च कम कर देते हैं और मुनाफा-दर बढ़ा देते हैं। इसके साथ ही उपलब्ध-ढाँचामूलक सुयोग-सुविधाओं पर भी विचार किया जाए, तब तो सोने में सुहागा है। इन तमाम सुविधाओं के बंदोबस्त के लिए ही, 'केमिकल हब' को केन्द्र में रखकर, एक विशेष अर्थनैतिक अंचल या 'सेज ' (स्पेशल इकोनॉमिक ज ोन) गढ़ने की बात, बार-बार दोहरायी गयी है। तमाम कि स्म का सेवा-कर और निर्यात-कर माफ कर दिया जाएगा, आयात-कर में व्यापक छूट दी जाएगी, उदार श्रम क ानून के नाम पर न्यूनतम मज ूरी ख़त्म करके समझौते के आधार पर अस्थायी श्रमिकों की नियुक्ति वगैरह कई-कई नज रानों के आयोजन के जरिये, तमाम उद्योग-संस्थाएँ फल-फूल उठेंगी, इसमें कोई शक नहीं है। इसके अलावा, लम्बी जंग के दम पर अर्जित विभिन्न अधिकार भी 'सेज ' क ानून के अन्तर्गत बिल्कुल तबाही के कगार पर बैठे, मज दूरों के कन्धों पर मालिकों के हल-हथियार और ज यादा वज नी हो उठेंगे। इसमें पल भर की भी जीविका या जीवन की सुरक्षा नहीं है। ऊपर से 'सेज ' इलाके में परिवेश सम्बन्धी कोई भी कानून लागू नहीं होते, इसलिए परिवेश और जन-स्वास्थ्य की जो भयावह क्षति होने वाली है, इसके परिणाम भी काफी सुदूर प्रसारी होंगे। ऐसे भी रासायनिक उद्योग में उत्पन्न विभिन्न वर्ज्य पदार्थ, एक तरफ, जहाँ परिवेश के स्वाभाविक रासायनिक प्रक्रियाओं में बाधा डालते हुए, वास्तुतंत्र का सन्तुलन नष्ट करते हैं, वहीं दूसरी तरफ सीधे-सीधे ढंग से मनुष्य समेत अन्यान्य प्राणियों और उद्भिदों में भी, इनका प्रभाव जानलेवा ज हर भर देता है। ऐसी हालत में परिवेश क ानून में रत्ती भर भी शिथिलता, परिवेश-संकट को तीव्रतर कर देगी, यह बात कहने की अपेक्षा नहीं रखती। 'सेज ' के रक्षा-कवच से ढँका केमिकल हब का प्रस्ताव, नए सिर-दर्द का कारण बनने वाला है। इस पृष्ठभूमि में यह याद रखना बेहद ज रूरी है कि हमारे देश में भोपाल गैस की दुर्घटना घट चुकी है। हाँ, वह 'सेज ' इलाका नहीं था, देश के तमाम क ानून ही वहाँ लागू होने चाहिए थे। इसके बावजूद इस दुर्घटना के मुजरिम, यूनियन कार्बाइड पर लगाम नहीं कसी जा सकी। ऐसे में 'सेज ' इलाके में अगर कोई दुर्घटना घटती है, तो क्या नतीजा होगा, इसका अन्दाज ा लगाना बेहद आसान है।

आधुनिक तकनीक और पूँजी-बहुल ऐसे उद्योगों में नौकरी या रोज गार की संभावना अत्यन्त सीमित होती है। 18 मई, 2007 को राज्य सरकार की तरफ से केमिकल हब के बारे में एक नोट प्रकाशित हुआ, जिसमें राज्य सरकार ने इस केमिकल हब की तुलना, नीदरलैंड के पोर्ट ऑफ रॉटरडम में निर्मित केमिकल हब से की है। उस नोट से ही यह पता चलता है कि उस अंचल में, साल भर में 57 मिलियन मैट्रिक टन परिशोधन-क्षमता सम्पन्न एक प्लांट के इर्द-गिर्द, एक केमिकल हब बन गया। जहाँ 60,000 लोगों को नौकरी मिली है। दूसरी तरफ, उसी नोट में यह भी कहा गया है कि यहाँ आइ.ओ.सी., जो प्लांट निर्माण करेगी, उसकी परिशोधन-क्षमता साल में लगभग 15 मिलियन मेट्रिक टन होगी। अस्तु, हमारे राज्य में प्रस्तावित केमिकल हब में कितने लोगों को नौकरी मिल सकती है, इसका आसानी से अन्दाज ा लगाया जा सकता है। इस सरकारी दलील के मुताबिक ही 15 से 16 हजार लोगों से ज् यादा नौकरी नहीं मिल सकती। राज्य सरकार के नोट मुताबिक ही यहाँ मुख्यतः पेट्रोकेमिकल कि स्म की सामग्रियाँ तैयार की जाएँगी, अपरिष्कृत खनिज तेल और प्राकृतिक गैस, इस उद्योग का प्राथमिक कच्चा माल है, जिसके दम पर तेल-शोधनागार या गैर क्रैकर वगैरह प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र हैं। ऐसी रासायनिक सामग्रियों के उत्पादन अंचलों की मूल समस्या है, ज हरीले वर्ज्य जो तेज -सक्रिय परमाणु वर्ज्य से कम ख़तरनाक नहीं हैं। किसी भी विक्रियाकरण में थोड़े-बहुत अयाचित पदार्थ निर्गत होते हैं, जिनका दुबारा इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। अंग्रेजी परिभाषा में जिसे कहते हैं अनइण्टेण्डेड बाइ प्रोडक्ट! जैसे डाय-ऑक्सिन, फूरन वगैरह ज हरीले यौगिक हैं। इसके अलावा हवा में भी कई कि स्म के प्रदूषण फैलाने वाली गैसें घुल जाती हैं। वर्ज्य पदार्थों में मौजूद होता है, पारा, आर्सेनिक समेत विविध धातुओं के भारी-भारी उत्पादन। ये सब कहाँ जाएँगे? ज हरीले वर्ज्य का परिमाण कम करना या उन्हें नियन्त्रित करना काफी ख़र्चीला होता है। यह अतिरिक्त ख़र्च कौन उठायेगा? सभी कल-कारखानों के इस कि स्म के वर्ज्य, बेभाव नज दीकी नदी, नहर या समुन्द्र में उँड़ेल दिए जाते हैं। काफी सारे वर्ज्य काला धुआँ बनकर हवा में घुलमिल जाते हैं। स्थानीय वायुमंडल में एक भारी पर्दा टाँग देते हैं, हवा में सूक्ष्मातिसूक्ष्म असंख्य कण इकट्ठे होते हैं, जो इन्सान के दिल-पसलियों को खोखला कर देते हैं। भारी-भारी तत्त्व मिट्टी के ऊपर, मिट्टी के नीचे, स्थानीय पोखर-तालाबों में बिखरे होते हैं। धीरे-धीरे नदियाँ-सागर, नहर-झील, वन-जंगल, पेड़-पौधे समूचा अंचल ज हरीला हो उठता है। तीखा ज हर मिट्टी से रिस-रिसकर भूतल में प्रवेश कर जाता है और पेय जल तक ज हरभरा हो उठता है; सिंचाई के जरिये

खेत इसके शिकार होते हैं और परिणामस्वरूप फसलें, खाद्य-फसल बर्बाद और हानिकारक हो उठती हैं। अंत में यही ज हर मानव शरीर में प्रवेश कर जाता है और लोग असाध्य रोगों के शिकार हो जाते हैं। यह एक भयंकर परिणति होती है। सारा का सारा अंचल निवास-योग्य नहीं रहता। वह इलाका छोड़कर, अपने कारखाने समेटकर, बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ भी अन्यत्र जा बसने को लाचार हो जाती हैं। दुनिया में इसकी असंख्य मिसालें हैं। इसलिए 'सेज ' गठित करके, किसी क्षेत्र में रासायनिक उद्योगों की स्थापना, दरअसल उस क्षेत्र को ध्वंस की तरफ धकेल देने के बराबर है।

2. रासायनिक उद्योग में दुनिया का तजुर्बा

केमिकल हब चाहे जितनी भी खूबसूरत संज्ञा लगे, सच तो यह है कि यह नयी बोतल में बंद पुरानी शराब है। दुनिया में अनगिनत जगहों पर, असंख्य नामों से इस कि स्म के उद्योग रचे-गढ़े जा रहे हैं, रसायन उद्योग उत्पादक उन तमाम अंचलों के तजुर्बे सुखद नहीं हैं, बल्कि इसके विपरीत हैं। किसी समूचे इलाके में एकाधिक कारखानों से निकलते हुए वर्ज्य, किस क दर भयावह विपर्यय ला सकते हैं, इसका ज्वलन्त उदाहरण है ब्राज ील की रसायन उद्योग-नगरी क्यूबा। सन् सत्तर के दशक में ऊँचे कि स्म की आर्थिक वृद्धि के नाम पर, वहाँ असंख्य निवेशकों को आमंत्रित किया गया। विदेशी निवेश का ऐसा ज्वार उमड़ पड़ा कि वहाँ उद्योग-नगर बन गया 'दि केमिकल कैपिटल ऑफ ब्राज ील'! नगर के किनारे-किनारे बहती हुई नदी, करीब ही लैटिन अमेरिका का सबसे बड़ा बन्दरगाह सैन्टोश जल-पथ, स्थल-पथ की अपूर्व परिवहन व्यवस्था; उसके साथ जोड़ी गयी थी वाणिज्य-अनुकूल अनियन्त्रित उद्योग-नीति, सस्ता श्रम, अबाध टैक्स छूट, नाममात्र मूल्य पर ज मीनें! कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि क्यूबा भी अबाध लूट-खसोट की अबाध-भूमि हो उठी। दुनिया का अन्य कोई भी देश, उन दिनों इतनी-इतनी टैक्स-छूट देने को राज ी नहीं था, इसलिए सर्वोच्च मुनाफा कमाने का आश्वासन पाकर ब्राजी ल निवेशकों का आदर्श गंतव्य स्थल बन गया। काफी कुछ वर्तमान पश्चिम बंगाल या भारतवर्ष की तरह ही।

2.1 ब्राज ील की मृत्यु-घाटी

परिकल्पनाहीन, विश्रृंखल निवेश, बेलगाम वाणिज्य और अबाध छूट पर निर्भर, निर्यात-अर्थनीति की कैसी खौफ नाक परिणति हो सकती है, क्यूबा इसका अन्यतम उदाहरण है। कुल एक ही दशक में वह शहर, मृत्यु की घाटी में परिणत हो गया।

इसीलिए क्यूबा को 'दि वैली ऑफ डेथ' कहा जाता है। जहाँ पहाड़ों तक फैला हुआ एटलांटिक का घना वन-अंचल ध्वंस हो गया। सजीव-शांत नदी धीरे-धीरे मृत जलाशय में बदल गयी। उस नदी में कहीं, कोई जान नहीं है, जिसकी छाती में सिर्फ ज हरीला पानी भर बच रहा है और चंद जलजात उद्भिद! शहर के चप्पे-चप्पे में ज हर भर गया है। ज हरीली हवा, ज हरीली मिट्टी, ज मीन, जंगल! क्यूबा में भी पैदा होने वाले शिशु दिमाग हीन होते हैं। कोई-कोई शिशु जीवित होते हैं, तो वे विकलांग होते हैं। भारी-भारी हवा, ऑक्सीजन की अस्वाभाविक कमी, दिल खोलकर साँस लेने का भी कोई उपाय नहीं होता। दिन के वक्त भी आसमान पर अँधेरा छाया रहता है। चारों तरफ सिर्फ रोग-संताप! इस इलाके के अधिकांश लोग तपेदिक, कैंसर, हँफनी, दिल के रोग के शिकार हैं। पहाड़ों के सघन वनांचल की जगह ले ली है, रसायन के झाँसभरे धुएँ से झरे हुए, ठूँठ-अपर्ण विच्छिन्न-विक्षिप्त नाममात्र के पेड़-पौधों ने। अक सर भू-स्खलन होता है, दुर्घटनाओं में जान गँवाते हैं लोग-बाग । साथ ही रह-रहकर एसिड की घनघोर बारिश होती रहती है। कुल मिलाकर सामग्रिक विपर्यय का आलम छाया रहता है। सन् 1985 में क्यूबा की परिस्थिति बेकाबू हो गयी। उसी वर्ष, जनवरी के महीने में, लगातार दो दिनों तक 15 इंच तक बारिश में, क्यूबा घाटी में सैकड़ों की संख्या में भूस्खलन होते रहे। विला पैरिसी में स्थित अमोनिया की विराट पाइप लाइन टूट गई और पल भर में घने-काले-गाढ़े धुएँ से समूचा क्षेत्र भर उठा। इस दुर्घटना में सैकड़ों लोग घायल हो गए, सैकड़ों लोग बीमार पड़ गए। शुरू-शुरू में सरकार ने ऐसे किसी हादसे से साफ इनकार कर दिया, लेकिन बाद में प्रशासन को युद्ध कालीन स्तर पर उस इलाके को खाली कराने के लिए विवश होना पड़ा। साओपाओलो के गवर्नर ने सरकारी तौर पर आपातकालीन स्थिति की घोषणा की। राज्य की प्रदूषण-नियंत्रण संस्था को निर्देश दिया गया कि स्थिति को तत्काल नियंत्रण में लाया जाए, जो असंभव था। यही वजह है कि बीस सालों से भी अधिक समय से असंख्य संस्थाओं के सामूहिक प्रयास के बावजूद, वहाँ प्रदूषण की मात्रा कम नहीं की जा सकी है और क्यूबा को पूरी तरह प्रदूषण-मुक्त नहीं किया जा सका है।

2.2 जापान : मिनामाटा रोग

आइए, अब एशिया महादेश पर नज र डालें। जापान के पश्चिम में, सागर तट पर एक छोटा-सा गाँव है, मिनामाटा। पिछली शती के बिल्कुल प्रारम्भ में वहाँ 'निप्पन केससो कम्पनी' नामक कार्बाइड कारखाना लगाया गया था। लेकिन उस कम्पनी को

सिर्फ कार्बाइड बनाकर, ख़ास मुनाफ ा नहीं हो रहा था। धीरे-धीरे कार्बाइड से पहले निप्पन केससो तैयार किया गया और कैल्शियम सल्फाइड और बाद में अमोनियम सल्फेट-समृद्ध रासायनिक खाद तैयार होने लगा। इस बीच मित्सुबिसी भी उनके साथ संयुक्त उद्योग में शामिल हो गया। सन् 1930 से पारा यौग इस्तेमाल करके, उन लोगों ने एसिटिलिन बनाने की तकनीक शुरू की। इसके बाद, वहाँ एसिटिक एसिड, एसिटोन, ब्यूटीनल समेत तरह-तरह के जैव पदार्थ का निर्माण होने लगा। इसी आधार पर एसिटिलिन केमिस्ट्री के क्षेत्र में उन लोगों ने अपना एकछत्र दखल जमा लिया। सिर्फ देश में ही नहीं, विदेशों तक में। कोरिया समेत विभिन्न देशों में निप्पन केससो का साम्राज्य प्रतिष्ठित हो गया। निप्पन केससो के विकास का हाथ थामे-थामे, इस बीच मिनामाटा का चेहरा भी काफी कुछ बदल गया। मिनामाटा पहले गाँव से शहर बना; उसके बाद, इसने बदस्तूर उद्योग-नगरी का रूप ले लिया। काफी सारे रास्ते बनाए गए, सम्पर्क और परिवहन व्यवस्था दुरुस्त की गयी। यह तो विकास का एक पक्ष था, बाहरी पक्ष? आपात् वैभव की आड़ में कई-कई अनकही कहानियाँ, गुम हुए अनगिनत जीवन, संसार-परिजन, उन लोगों की जीविका, जीवनचर्या दबकर रह गयी। लोगों की नज रों की आड़ में, बेहद ख़ामोशी के साथ, वहाँ के मत्स्यजीवी सम्प्रदाय, किसान और खेती तिल-तिल करके ध्वंस हो गयी। रसायन शिल्प के निर्मम हाथों ने इन्सान के जीने के तमाम रसद तबाह कर दिये। कारखानों से निकलते हुए, अनियन्त्रित वर्ज्य ने सागर के पानी को विषाक्त कर डाला। वहाँ के जल में उत्पन्न उद्भिद, मछलियाँ वर्ग प्रदूषित हो गयीं। विषाक्त रासायनिक उपादान खाद्यान्नों में प्रवेश कर गये। वहाँ से अन्यान्य जीवों में भी ज हर भरते हुए, अंत में इन्सानों के तन-बदन में घर कर गये। इसी तरह वहाँ की स्थानीय मिट्टी, हवा, जल, वन-जंगल प्रदूषित हो गये। कुल मिलाकर एक भयंकर परिस्थिति पैदा हो गयी, जिसे लेकर न कम्पनी ने सिर-दर्द मोल लिया, न सरकार ने। परिणामस्वरूप प्रदूषण जारी रहा और इसके शिकार लोगों की संख्या भी तेज ी से बढ़ती रही।

सन् 1976 में हालत ख़ौफनाक हो उठी। एक दिन एक अजीब-सा रोग लिये-दिये चार-चार लोग अस्पताल में भर्ती हुए। उन लोगों की तादाद दिनोंदिन बढ़ती गयी। अक सर वे लोग मानसिक विकृति के शिकार हो जाते थे; उन लोगों के तन-बदन-चेहरे खिंचने लगते थे, दाँत पर दाँत चढ़ जाते थे और वे लोग बेहोश हो जाते थे। धीरे-धीरे वे लोग कोमा में चले जाते थे और अंत में दम तोड़ देते थे। धीरे-धीरे इस रोग ने पूरे इलाके में महामारी का रूप ले लिया। चूंकि इस अजीबोग रीब रोग के बारे में किसी को कोई जानकारी नहीं थी, अस्तु इसका इलाज भी संभव नहीं

था। इसलिए मृत्यु अनिवार्य थी। कुछ दिनों बाद, यह पता चला कि वे सभी बीमार लोग, समुन्द्र में मछली, पकड़ने जाते थे और वही मछलियाँ वे लोग नियमित रूप से खाते भी थे। स्थानीय अस्पताल के डॉक्टर हरोसुयाइ ने ही, पहली बार समुन्द्र अपने सन्देह का निशाना बनाया। कुछ ही दिनों बाद, उसी साल कुमामोतो विश्वविद्यालय के झुंड भर शोधकर्ता लोगों ने पता लगाया कि इस जानलेवा रोग के उत्स, समुन्द्र में फेंके जाने वाले वर्ज्य पदार्थ ही हैं, जिसमें ज रूरत से ज यादा पारा मिला हुआ है। इस ख़बर से राष्ट्रीय स्तर पर हलचल मच गयी। चंद केससो ने यह मंतव्य अस्वीकार करते हुए, उत्पादन जारी रखा। सरकार को भी अपनी तरफ मिलाने में, उन लोगों को कोई परेशानी नहीं हुई। परिवेश को परिवेश मुक्त करना तो दूर की बात, बल्कि सरकारी तौर पर इस रिपोर्ट की कड़ी आलोचना की गयी। केससो के विरुद्ध स्थानीय मत्स्यजीवी लोगों के आक्रोश पर राष्ट्रीय दमन-पीड़न का चक्र घूमने लगा। दूसरी तरफ झुंड बिल्लियाँ विकारग्रस्त होकर, समुन्द्र में छलाँग लगाकर आत्महत्या करने लगीं। रोग-शिकार पंछी-पखेरू, पटापट ज मीन पर धराशायी होने लगे। वास्तु-तंत्र में सामग्रिक विपर्यय गहरा आया। इलाके के निवासियों में बहुतेरे लोग, अंग-विकृति समेत तरह-तरह के रोगों के शिकार हो गये। उन दिनों, निप्पन केससो, लोगों का मुँह बंद कराने में सक्रिय हो उठी। आक्रान्त लोगों के हाथों में वे लोग नक द धन ठूँसने लगे। सरकार इस मामले में पूरी तरह ख़ामोश रही। उन लोगों ने किसी कि स्म के मुआवजे की घोषणा नहीं की। दूसरी तरफ सन् 1993 तक चालीस हज ार से भी अधिक लोग मुआवजे की उम्मीद में बैठे रहे। एक तरफ मुआवजे की कोई बात नहीं, दूसरी तरफ उत्पादन भी नहीं रुका, न ही प्राकृतिक अनाचार रुका। केससो पर किसी कि स्म के नियन्त्रण का भी फ रमान जारी नहीं हुआ। सिर्फ स्थानीय मत्स्यजीवी लोगों पर ही निषेधाज्ञा जारी कर दी गयी। वे लोग सागर से मछलियाँ तो पकड़ सकते थे, मगर खा नहीं सकते थे। इधर यह ख़बर चारों तरफ फैल चुकी थी। इसलिए उस इलाके की मछलियाँ, अब कोई नहीं ख़रीदता था। ज ाहिर है कि बेहद स्वाभाविक ढंग से ही उस समूचे अंचल के स्थानीय मत्स्यजीवी लोगों पर विराट अर्थनैतिक विपर्यय उतर आया। इसी बीच केससो लोगों ने वर्ज्य पदार्थ, करीब के मिनीमाटा नदी में उँड़ेलना शुरू कर दिया। नदी के जल के साथ बहते हुए इस बार यह प्रदूषण दूसरे-दूसरे शहरों तक फैल गया। अब, मिनामाटा रोग ने अन्यत्र भी लोगों को अपने शिकंजे में जकड़ लिया। असंख्य लोग मरते रहे और चूंकि प्रदूषण-नियन्त्रण के अलावा, इस रोग का अन्य कोई प्रतिकार नहीं था, इसलिए मिनामाटा रोग की परिणति और अधिक भयावह हो उठी। केससो के लोग

हैरत में पड़ गये, मगर उन लोगों ने किसी हाल भी यह क   बूल नहीं किया कि उन लोगों के वर्ज्य से फैला प्रदूषण ही, इस भयंकर महामारी का कारण है और नतीजा यह हुआ कि रोग के शिकार लोगों को आज तक मुआवजा नहीं मिला।

3. उद्योग संस्थाओं का कलंकित इतिहास

समूचे विश्व भर में रासायनिक पदार्थ उत्पादन और वाणिज्य पर अपना कब्ज   ा जमाये हुए, मुट्ठी भर विशाल बहुराष्ट्रीय संस्थाएँ हैं   बी. ए. एस. एफ., ड्यूंप, डाउ, मनसांटो, शेल, मित्सुबिसी वगैरह। एक तरफ उन लोगों ने समूची दुनिया का परिवेश दूषित कर डाला, दूसरी तरफ, कई-कई तरीकों से, कई-कई क्षेत्रों में समाज को ज   रूरत से ज   यादा रासायनिक उद्योग-निर्भर कर डाला। सुनने में आया है कि डाउ केमिकल कम्पनी अपना विज्ञान और तकनीक लेकर, हमारे राज्य के प्रस्तावित केमिकल हब में आने के लिए आग्रही है। पिछली कई शताब्दियों से इस डाउ कम्पनी ने दुनिया के परिवेश और जनसंख्या को ख़तरे में डाल दिया है। युद्ध, खाद्य, कृषि-क्षेत्र से लेकर उत्पादन अंचल तक हर कहीं प्रदूषण! मिशिगन के मिड्लैंड की मिसाल ही ली जाए, जहाँ डाउ ने अन्यतम बृहद् कारखाने, टिट्टा बायासी नदी का पानी, यहाँ तक कि वहाँ के भूतल में भी ज   हर भर दिया है। स्थानीय लोग इसके खिलाफ आन्दोलन में सक्रिय हैं। उस इलाके के लोगों में कैंसर समेत सैकड़ों रोगों से आक्रान्त हैं और इसके लिए उन लोगों ने डाउ कम्पनी को जिम्मेदार ठहराते हुए, उसके खिलाफ मुकदमा दायर किया है। ज   हरीले डायोक्सीन की मात्रा वहाँ अस्वाभाविक तौर पर इतनी ज   यादा है कि वहाँ सिर्फ कैंसर ही नहीं, हृदय-रोग, डायबिटीज, पैदाइशी-विकृति, चर्मरोग समेत सैकड़ों जटिल रोग शुरू हो सकते हैं। मिशिगन डिपार्टमेंट ऑफ इन्वायरनमेंटल क्वालिटी की बुलेटिन से ही, यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है।

यूनियन कार्बाइड के अधिग्रहण की वजह से इस कम्पनी ने दुनिया के बृहद्तम रासायनिक उद्योग संस्था के तौर पर अपने को दूसरे स्थान पर प्रतिष्ठित कर लिया है। यूनियन कार्बाइड, हमारे देश में काफी जाना-माना नाम है। सन् 1984 में भोपाल में स्थित, इनके कारखाने में हुई गैस-दुर्घटना हम भूले नहीं हैं। इस हादसे को मानव-इतिहास में हमेशा जघन्यतम उद्योग-दुर्घटना के तौर पर अभिहित किया जाता है। दुर्घटना-स्थल को साफ   -सुथरा बनाने और क्षतिग्रस्त परिवारों को क्षतिपूरण करने की जिम्मेदारी, यूनियन कार्बाइड हमेशा नज   रअन्दाज   करती रही है। अपनी जिम्मेदारी टालने का यह रवैया, डाउ कम्पनी द्वारा आज भी जारी है। उन लोगों की वकालत करने के लिए, इस बार मैदान में उतरे हैं, हमारे मुख्यमंत्री के अत्यन्त

लाडले, सिंगुरख्यात, टाटा समूह के कर्णधार, श्रीमान रतन टाटा। भोपाल कांड के सारे दाय-दायित्व से डाउ कम्पनी को पूरी तरह मुक्त किया जाए। इस आशय का एक ख़त उन्होंने डाउ के एकि ज क्यूटिव, एण्ड्रू लिवेरिस की हिमायत करते हुए केन्द्रीय योजना आयोग के डिप्टी-चेयरमैन, श्री मॅन्टेक सिंह अहलुवालिया को भेजा है। चूंकि तथ्यों की जानकारी लेने का अधिकार कानूनन हम सबको है, इसलिए यह ख़बर भी गोपनीय नहीं रही।

बहरहाल डाउ कम्पनी की बदनामी, इससे भी ज्‍ यादा प्राचीन है। वियतनाम युद्ध के समय, समसाण्टो के साथ हाथ मिलाकर, 'नापाम' बम की रसद, इस डाउ कम्पनी ने ही जुटायी थी। इसके साथ ही इस कम्पनी ने वनांचल ध्वंस करने का उपकरण 'एजेंट ऑरेंज' भी प्रदान किया था। 2.4-डी और 2.4.5-डी इन दोनों डॉयक्सिन को बराबर-बराबर परिमाण में मिलाकर, यह एजेंट ऑरेंज तैयार किया गया था। इसके प्रभाव से लिवर, कैंसर, डायबिटीज , दीर्घ-स्थाई मलेरिया, डायरिया, गर्भपात, शिशुओं का असमय जन्म, अंग-विकृति, रोग-प्रतिशोध-क्षमता ह्रास वगैरह सैकड़ों तरह की समस्याएँ जाग उठीं। अमेरिकी फौज ने वियतनाम में लगभग 21 लाख गैलन 'एजेंट ऑरेंज' इस्तेमाल किया था। परिणामस्वरूप लगभग 3,181 गाँवों में फैले हुए ज हरीले रासायनिक प्रभाव से, चार लाख वियतनामवासी काल के गाल में समा गए। आक्रान्त अंचलों में खाद्यान्न में डॉयक्सिन का प्रभाव आज भी विद्यमान है। इसलिए वियतनाम की दूसरी और तीसरी पीढ़ी के पाँच लाख शिशु जन्मजात विकलांग हैं। प्रसंगवश यह भी उल्लेखनीय है कि अमेरिकी फौज का एक बहुत बड़ा हिस्सा भी 'एजेंट ऑरेंज' ज हर से आक्रान्त है।

दूसरी तरफ 'नापाम' बम-विस्फोट में भी हज ारों से ज्‍ यादा लोगों की मौत हो गयी। नापाम बम, जो असल में नैपथेनिक और पामिटिक नामक दो एसिड के सम्मिश्रण से तैयार पाउडर है, जिसे गैसोलिन के साथ मिला दिया जाए, तो वह एक घनी-चिट्चिटी, बादामी रंग की जेली बन जाती है। यह गैसोलिन जैसी तेज ी से नहीं जलती, फिर भी ज्वलनशील पदार्थ के तौर पर, गैसोलिन से भी ज्‍ यादा असरदार है। सिर्फ बम में ही इस्तेमाल किए जाने के लिए ही, सन् 1942-43 में, हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर, लुई एस. फिशर के नेतृत्व में झुंडभर, रासायनिक-विशेषज्ञों ने 'नापाम' बम तैयार किया था। बम के रूप में 'नापाम' के इस्तेमाल का प्रमुख कारण यह है कि बेहद कम ख़र्च में इसके ज रिये दुश्मनों को बहुत ज्‍ यादा नुकसान पहुँचाया जा सकता है। 100 गैलन का 'नापाम' तैयार करने में लगभग चालीस डॉलर का ख़र्च आता है और इसका एक विस्फोट, 2500 वर्ग मीटर जितनी जगह

को जला डालता है। इसके अलावा किसी टैंकर पर अगर 50 फीट के करीब से आघात किया जाये, तो वह टैंक ध्वंस हो जाता है। सुरंग या गुफा के अन्दर शत्रु से मुक ाबले के लिए 'नापाम' बेहद असरदार है। चूंकि यह जेली की तरह चिट्चिटा होता है, इसलिए जहाँ कहीं एक बार चिपक जाता है, तो आसानी से इसे छुड़ाया नहीं जा सकता। अगर कहीं यह नसों से छू भी जाए, तो नसें जल जाती हैं। विस्फोट-स्थल के आस-पास की हवा में कार्बन मोनोक्साइड की मात्रा इतनी बढ़ जाती है (20 प्रतिशत; जहाँ 0.4 प्रतिशत ही जानलेवा होता है) कि साँस की तकलीफ शुरू हो जाती है; रक्तचाप तेज ी से घटने लगता है। और जल्दी ही आक्रान्त लोगों की मौत हो जाती है। दूसरे महायुद्ध के समय, सन् 1944 की 23 जुलाई को मित्र-शक्तियों ने ही जापान के लिनियान द्वीप पर पहली बार 'नापाम' बम फेंका था। सिर्फ टोकियो पर ही, सन् 1945 की 9 और 10 मार्च को 1500 से भी ज यादा टन के नापाम बम गिराये गये थे। जापान की 40 प्रतिशत ज मीन, इसके आघात से जलकर ख़ाक हो गयी थी। कोरिया युद्ध के समय, अमेरिका हर दिन औसतन 2,50,000 पाउंड 'नापाम' बम बरसाता था। सन् 1951 की 20 जनवरी को अमेरिकी वायुसेना ने दक्षिणी कोरिया के यांगचून अंचल के करीब, एक गुफा के अन्दर बम फेंका, वहाँ शरणागत लगभग तीन सौ लोग झुलसकर मर गये। सन् साठ के दशक में वियतनाम युद्ध में 4 लाख टन नापाम बी नामक बमों का प्रयोग किया गया था। इस बार नैपथेनिक और पामिंटिक एसिड के बजाय, इसमें गैसोलिन के साथ पॉलिस्टाइरिन और बेंजिन मिलाया गया था, जिसके फलस्वरूप यह मिश्रण सख़्त रूप ले लेता है। इसी वजह से उन दिनों और ज यादा नियन्त्रित ढंग से विस्फोट संभव होता है। उन दिनों के उस नारकीय हत्याकांड के प्रतिवाद में, बंगाल के लोग भी सड़क पर उतर आये थे। लाखों लोगों ने नारा लगाया था 'तुम्हारा नाम, मेरा नाम, वियतनाम! वियतनाम!' ख़ैर, युद्ध में रासायनिक पदार्थों का इस्तेमाल, कुछ नया नहीं है। सच पूछें, तो तमाम छोटे-बड़े अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिसम्पन्न रासायनिक उपादान प्रस्तुतकर्ता संस्थाओं का ऐसा ही इतिहास रहा है। चूंकि युद्ध का हाथ थामकर ही, इस उद्योग का विकास हुआ, इसलिए यही स्वाभाविक भी है।

बहरहाल, युद्ध का हाथ थामकर ही रासायनिक उद्योग विकसित हुआ है। इसलिए अपनी तमाम विषक्रिया समेत, इसने हमारी चारों तरफ की दुनिया को इस हद तक निगल लिया है कि आसानी से इससे छुटकारा पाना मुश्किल होगा। जैसे, प्रसाधन उद्योग को भी छोटे रूप में नहीं देखा जा सकता, इस क्षेत्र में भी करोड़ों डॉलर का व्यापार होता है। अखबारों में पूरे पन्ने का विज्ञापन पढ़ें और उन्नत देशों के

शॉपिंग मॉलों में जाएँ, तो इसका प्रभावी नज ारा देखा जा सकता है या समझा जा सकता है। बुद्ध बाबू की मेहरबानी से अब, कलकत्ता में भी उसकी आँच, निश्चित रूप से मिलने लगी है। वैसे प्रसाधन उद्योग के साथ-साथ निर्मित उसके 'अनुषंगी' उद्योग का जिक्र, अगर न भी किया जाए। सिर्फ यह याद दिलाना ज रूरी है कि इसी डाउ ने ब्रेस्ट-इम्प्लांट के लिए सिलिकॉन का प्रयोग शुरू किया था, उसे सुरक्षित घोषित किया था, जिसे शुरू-शुरू में जापान की यौन कर्मियों ने इस्तेमाल किया। ब्रेस्ट कैंसर का शिकार होने के साथ, इसका सरोकार प्रमाणित हुआ और फलस्वरूप बाद के दिनों में इस बारे में अमेरिकी देश में मुकदमा भी दायर किया गया। डाउ कम्पनी को बहुत बड़ी रक म, जुर्माने के तौर पर अदा करनी पड़ी। ज हरीले केमिकल को सुरक्षित घोषित करने वाली यह एकमात्र घटना नहीं है। विभिन्न व्यापारिक संस्थाएँ जान बूझकर भी ऐसा करती आयी हैं, विभिन्न मुकदमों से यही बात प्रमाणित हुई है। डाउ केमिकल्स, 'डर्सबैन' नामक क्लोरोपाइरिफोस ग्रुप का एक कीटनाशक बाज ार में लाया था। यह कीटनाशक, लॉन-बगीचों में इस्तेमाल के लिए रातोंरात लोकप्रिय हो उठा। रिसर्च में उपलब्ध तमाम तथ्य, जानबूझ कर भी गुप्त रखकर, जो 'डर्सबैन' स्वास्थ्य के लिए बेहद ख़तरनाक है, उन लोगों ने उसे 'सुरक्षित' घोषित किया।

इसकी प्रतिक्रियास्वरूप क्षतिग्रस्त असंख्य नागरिकों ने कम्पनी पर मुक दमा ठोंक दिया। उस कंपनी को बीस लाख अमेरिकी डॉलर बतौर जुर्माना चुकाना पड़ा। अंत में, घरेलू इस्तेमाल के लिए 'डर्सबैन' निषिद्ध घोषित किया गया।

सिर्फ डाउ ने ही नहीं, व्यापारिक तौर पर अन्यान्य निर्मातागण की विशाल संख्या के खिलाफ भी रासायनिक सामानों को 'सुरक्षित' घोषित करने के इल्जाम बार-बार लगे हैं। दुनिया की सबसे बड़ी केमिकल कम्पनी ड्यूपॉ का ही जिक्र किया जाए। उनके प्रोडक्ट, 'टेफलेन'-सम्बन्धी मामला अमेरिकी देश में, लगभग सभी लोग जानते हैं। इसका अन्यतम प्रोडक्ट परफ्लूओरोअक्टेन सल्फोनेट, मानव-देह में शोषित हो सकता है, उस वजह से कैंसर समेत सैकड़ों असाध्य रोग जन्म ले सकते हैं, अब यह आरोप लगाया जाने लगा है कि यह सच्चाई बीस से भी ज यादा वर्षों तक छिपाये रखी गयी। टेफलेन मामले में ड्यूपॉ को दस लाख से भी अधिक अमेरिकी डॉलर मुआवजा देना पड़ा। इसके अलावा, वाशिंगटन में ड्यूपॉ के कारखाने के सन्निहित अंचल में भी परिवेश-दूषण के सैकड़ों आरोप अब सच साबित हो रहे हैं। यथा, टेफलेन में इस्तेमाल किया गया 'सी-8' नामक भयंकर उपादान, स्थानीय नलों के पानी के ज रिये, उस इलाके के लोगों के तन-बदन में प्रवेश कर जाते हैं। उस इलाके

के निवासियों के खून की जाँच करके यह जानकारी मिली है। इसी कम्पनी का फफूँदनाशक, 'बेनलेट' व्यापक मात्रा में फसलें नष्ट कर देता है, जिसमें प्रमुख तौर पर टमाटर की फसल, फर्न, आर्किड वगैरह विभिन्न कि स्मों की फसलें। युक्त राष्ट्र, फिलिपीन्स, कोस्टारिका, थाइलैंड समेत बहुत-से देशों में यही कुप्रभाव नज र आया। इस मामले में भी सच्चाई छिपाकर, वह उत्पादन बाज ार में लाया गया, हालाँकि सन् 1992 में दूँयूप ने खुद इसकी खूबियों और खामियों की जाँच के लिए, कोस्टारिका में खोज-बीन, रिसर्च शुरू की, लेकिन इतने लम्बे अर्से में जमे हुए मामले और क्षतिपूरण की विराट रकम देखकर, कम्पनी ने जाँच के नतीजे से जुड़े तमाम कागजात नष्ट कर डाले। इस बारे में सन् 2001 में कोस्टारिका के दो प्लांट नर्सरी कम्पनियों ने कम्पनी के खिलाफ मामले दायर किये और उन्हीं मामलों के जरिये यह तहलका मचा देने वाली सच्चाई जाहिर हुई।

रसायन का प्रभाव सिर्फ प्रयोग तक ही सीमित नहीं होता, यह अन्यान्य क्षेत्रों में भी विस्तार करता है। जैसे, दक्षिणी फ्लोरिडा के एक केस में यह जानकारी मिली कि इक्वाडोर में 'बेनलेट' नामक फफूँदनाशक, खेती के क्षेत्रों से बाहर भी फैल गये और चिंगड़ी मछली को भयंकर नुकसान पहुँचाया। इसके लिए कम्पनी के ख़िलाफ 12.3 मिलियन अमेरिकी डॉलर जुर्माना निश्चित किया गया। इसके अलावा अगर काफी सावधानी न बरती गयी, तो स्वास्थ्य के लिए भी 'बेनलेट' जानलेवा नुकसान पहुँचा सकता है। मसलन गर्भवती महिलाएँ अगर इसके संस्पर्श में आ जायें, तो गर्भ की सन्तान को नुकसान पहुँचता है, जिसके परिणामस्वरूप बच्चे जन्मजात विकृत पैदा होते हैं। 'बेनलेट' के अलावा, दूँयूप के खिलाफ टेट्राइथाइल लेड (टेल) के खिलाफ भी आरोप लगाये गये हैं। यह गैसोलिन में मिलाया जाता था, जो शिशुओं के मानसिक विकास में बाधक होता था और इसके प्रभाव से कैंसर समेत कई-कई तरह के रोग हो सकते हैं। इसलिए सन् 1986 में अमेरिका युक्तराष्ट्र में 'टेल' युक्त गैसोलिन का इस्तेमाल बंद कर दिया गया। इसके बावजूद दूँयूप कम्पनी ने इसका निर्यात सन् 1991 तक जारी रखा।

एक अन्य रासायनिक पदार्थ है डाइब्रोमा क्लोरोप्रोपेन, संक्षेप में डी. बी. सी. पी! सन् 1979 में अमेरिका में इसका इस्तेमाल निषिद्ध कर दिया गया। इसके बावजूद, डाउ कम्पनी और शेल वगैरह व्यापारिक संस्थाओं ने इसका उत्पादन और निर्यात जारी रखा। इसका प्रमुख इस्तेमाल झाड़-झंखाड़ों को नष्ट करने के लिए किया जाता है। इसलिए भूमि और खलिहान के मालिक, अपनी मेहनत बचाने के लिए, इसके इस्तेमाल के लिए परम उत्साही हो उठे, दूसरी तरफ असंख्य खेत-मजूरों को काफी

नुकसान पहुँचा। जैसे, नंगे हाथ डी. बी. सी. पी. इस्तेमाल करने की वजह से, कोस्टारिका के 20-25 प्रतिशत किसान प्रजनन-क्षमता खो बैठे हैं, हालाँकि शेल कम्पनी सन् 1950 से ही डी. बी. सी. पी. की इस विषक्रिया से भी अवगत थी। पेस्टिसाइड ऐक्शन नेटवर्क ने जानकारी दी है कि सन् 1997 में कोर्ट के बाहर किए गए समझौते की वजह से, ग्यारह देशों में इस विषक्रिया से आक्रान्त, केले की खेती में नियुक्त 26,000 खेतिहरों को कुल मिलाकर 45 मिलियन अमेरिकी डॉलर इन दोनों कम्पनियों को हरज ाने के तौर पर देने को राज ी होना पड़ा।

इस देश में उद्योग-संस्थाओं की दायित्वहीनता आज भी भोपाल में वहन करनी पड़ रही है। सन् 1984 की 3 दिसम्बर को रात के अँधेरे में, भोपाल शहर के यूनियन कार्बाइड के रासायनिक कारख़ाने से निकली हुई ज हरीली गैस के प्रभाव में, कई हज ार लोगों की जानें चली गयीं। इस दुर्घटना ने डेढ़ लाख लोगों को पंगु बना दिया। आज तक जिस दुर्घटना की वजह से मृतकों की संख्या बाईस हज ार तक पहुँच चुकी है और भविष्य में यह संख्या और भी बढ़ती रहेगी। यह दुर्घटना, सिर्फ भारत में ही नहीं, समूची दुनिया के इतिहास में सबसे ज् यादा बड़ी और कुख्यात दुर्घटना है। उस रात इस कारखाने से निकली हुई लगभग सत्ताईस टन मिथाइल आइसो सायनेट और अन्यान्य जहरीली गैस ने समूचे भोपाल शहर को गैस-चेम्बर में बदल दिया। कारखाने के 6 सुरक्षा इन्तज ामों में से, एक भी इन्तज ाम कार्यकारी नहीं था और यूनियन कार्बाइड के निजी तथ्यों से यह जानकारी मिली कि महज ख़र्च कम करने के लिए कम्पनी की सुरक्षा और यंत्र-सरंजाम वगैरह के रखरखाव पर बिल्कुल ही ध्यान नहीं देती थी।

इस हृदय-विदारक दुर्घटना के 23 वर्ष बाद भी लगभग 50,000 लोग अभी भी उस दुर्घटना के कुपरिणाम भुगत रहे हैं। यूनियन कार्बाइड के ज हर के शिकार, माँ-बाप की सन्तानें भी उस ज हर के कुप्रभाव अपने-अपने बदन में, आज भी वहन कर रही हैं। भोपाल के उस कारखाने के आस-पास अंचलों में बसी माताओं के दूध में आज भी 1,3,5 ट्राइक्लोरोबेंजिन, डाइक्लोरोमिथेन, क्लोरोफॉर्म, सीसा, पारा जैसे ज हरीले तत्त्व घुलेमिले होते हैं। सन् 2001 में डाउ केमिकल्स ने यूनियन कार्बाइड को ख़रीद लिया। इसके बावजूद डाउ कम्पनी ने भोपाल दुर्घटना की जिम्मेदारी लेने से इनकार कर दिया। आजकल, डाउ कम्पनी द्वारा दुर्घटनाग्रस्त अंचल की साफ -सफ ाई करना, वहाँ के पेय-जल को शुद्ध करना, दुर्घटनाग्रस्त लोगों को हरज ाना देना, उन लोगों की चिकित्सा का बंदोबस्त करना, ज हरीले धुएँ से आक्रान्त और दुर्घटना के बाद भी जीवित लोगों के स्वास्थ्य का हमेशा ध्यान रखकर, दुर्घटना के शिकार लोगों

के लिए, विकल्प जीविका का इन्तजाम करना, भारतीय कानून-व्यवस्था का सामना करना उनके ये तमाम कार्य नामंजूर कर दिए गए। हज ारों लोगों द्वारा जि न्दगी के बदले, मुनाफ ा लूटने वाली डाउ कम्पनी का विरोध करना, इन्हीं आदर्श कारणों से क्या उचित नहीं है?

4. प्रदूषण, जन-स्वास्थ्य और नया साम्राज्यवाद

जाहिर है कि रासायनिक उद्योग और प्रदूषण आज प्रायः समानार्थी शब्द बन चुके हैं। उन्नत देशों में तीखे परिवेश-आन्दोलन के दबाव की वजह से विभिन्न राष्ट्र अकेले-अकेले या सामूहिक तौर पर, इस बारे में कई-कई क दम उठाने को लाचार हो गये हैं। इस बीच समूची दुनिया को ज हरमुक्त करने के लिए, सन् 2001 में स्टॉकहोम कन्वेंशन ने बारह रासायनिक द्रव्यों को 'डर्टी डज न' के तौर पर चिह्नित किया है। आजकल तो इन यौगिक पदार्थों में और भी अनेक द्रव्य जोड़ दिये गये हैं। उस सूची में, जैसे 'डॉयक्सीन', फूरन जैसे अवांछित ज हरीले वर्ज्य मौजूद हैं, उसी तरह 'डी.डी.टी.', 'ऐल्ड्रिन', 'डायएल्विन' समेत, अनेक क्लोरिन-युक्त कीटनाशक और ज हरीले बाइ-प्रोडक्ट भी शामिल किये गये हैं। इन्हें 'परजिस्टेंट ऑर्गनिक पॉल्युटेंट' या 'पी.ओ.पी. कम्पाउंड' कहते हैं! यानी ये सब सिर्फ विषाक्त ही नहीं हैं। संभवतः ये सब अक्षत हालत में परिवेश में घुले-मिले रह जाएँ और बायो-ऑकुमुलेटिव भी हो सकते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि खाद्यान्नों के जरिये ये सब निम्न स्तर के उद्‌भिद या प्राणी शरीर में प्रवेश करके, मानव-शरीर में संक्रमित हो सकते हैं। जैसे डी.डी.टी.! फर्ज करें, इसे घास पर छिड़क दिया जाए, वहाँ से यह गाय वगैरह की देह में प्रवेश कर जाए और वहाँ से गाय के दूध में मिल जाए और दूध के मारफत इन्सान के शरीर में और यहाँ तक कि अगली पीढ़ी के शरीर में भी प्रवेश कर जाए। इस कि स्म के ढेरों विषाक्त रासायनिक द्रव्यों को सामूहिक भाव से 'पी.बी.टी.' या 'परजिस्टेंट बायो-ऑकुमुलेटिव टॉक्सिक केमिकल' की श्रेणी में शामिल किया गया है।

इसके अलावा, एक विभाजन और है, जिन्हें 'कारसिनोजेनिक, म्यूटेजेनिक और टॉक्सिक टु रि-प्रोडक्शन' या 'सी. एम. आर. कम्पाउंड्स' कहा जाता है। यानी जो समस्त यौगिक पदार्थ कैंसर को जन्म दे सकते हैं या मानव शरीर में जिन परिवर्तन या म्यूटेशन कर सकते हैं या प्रजनन में क्षतिकारक हैं। पेट्रोकेमिकल उद्योग के बहुत-से पदार्थों के यही दो धर्म हैं। इसलिए यूरोप और अमेरिका ने इन सभी पदार्थों में, उच्च मात्रा में उत्पादन के क्षेत्र में तरह-तरह के विधि-निषेध आरोपित किये हैं।

उन्नत देशों में, ढेरों रासायनिक द्रव्यों पर सिर्फ पाबन्दी ही नहीं लग रही है या पी. ओ. पी., सी. एम. आर., पी. बी. टी., श्रेणीभुक्त यौग पदार्थों के उत्पादन पर नियंत्रण ही नहीं लगाया जा रहा है, बल्कि उद्योगों से निर्गत वर्ज्य-विषाक्त पदार्थों के परिमाण पर भी कड़ी निगरानी शुरू हो गयी है। ज ाहिर है कि भारत जैसे देश में इस कि स्म के नियंत्रण किस हद तक संभव हैं, इस बारे में सहज ही अन्दाज ा लगाया जा सकता है। इसके अलावा, इस्तेमाल के क्षेत्र में अनेक विपर्यय हैं। इस देश में, जिस ढंग से, नंगे हाथ, बिना किसी सुरक्षा-उपाय के, खतरनाक रासायनिक द्रव्य हिलाते-डुलाते हैं, यह देखकर कोई भी इन्सान सिहर उठेगा। अतिरिक्त श्रमिक-सुरक्षा का जि क्र तो छोड़ ही दिया जाए।

परिवेश पर रासायनिक औद्योगिक प्रदूषण के तीखे प्रभाव के बारे में, धीरे-धीरे जागरूकता बढ़ने की वजह से ही आज उन्नत देशों को नये सिरे से सोच-विचार करने की ज रूरत आ पड़ी है। यूरोप में 'रिच' नीति चालू हो जाने की वजह से बहु राष्ट्रीय रासायनिक द्रव्य-निर्माता संस्थाएँ, अपने-अपने कारखाने स्थानान्तरित करने की दिशा में प्रयत्नशील हो उठी हैं। 'रिच' का पूरा रूप है 'रजिस्ट्रेशन, इवैलुएशन एण्ड ऑथराइजेशन ऑफ केमिकल्स'। इस क ानून के फलस्वरूप परिवेश सम्बन्धी सभी जिम्मेदारियाँ ओढ़कर, विशाल पैमाने पर मुनाफ ा लूटना संभव नहीं होगा, इसलिए बहु राष्ट्रीय संस्थाएँ नयी-नयी जगहों की तलाश में जुट गयी हैं। जर्मन कम्पनी, बी. ए. एस. एफ. ने तो कह ही दिया है कि यह क ानून वास्तविकता पर आधारित नहीं है। इसके फलस्वरूप रसायन तैयार करने का ख़र्च जिस कदर आसमान छूने लगेगा, इन्सान इसका इस्तेमाल ही छोड़ देगा। लेकिन यूरोप अपनी जगह से नहीं हटा है। युक्तराष्ट्र भी इसी ढंग से रासायनिक शिल्प में अपना राष्ट्रीय-नियन्त्रण मज बूत कर रहा है। लेकिन वे लोग भी तमाम रासायनिक पदार्थों का व्यवहार छोड़ तो नहीं देंगे। यह अवास्तविक होगा। जैसे बहुत सारे क्षेत्रों में रसायन-उपयोग नहीं होना चाहिए, उसी तरह बहुत से क्षेत्रों में केमिकल अपरिहार्य है। उदाहरण के तौर पर, दवा उद्योग, चिकित्सा-क्षेत्र, वस्त्र उद्योग, निर्माण उद्योग, वगैरह। इसलिए तरह-तरह के रासायनिक द्रव्य उन लोगों को चाहिए ही चाहिए और तमाम विघ्न-बाधाओं को टालकर, यथासंभव सस्ती कीमत पर चाहिए। प्रसंगवश यह उल्लेख करना भी ज रूरी है कि 'रिच' ने यूरोप में ढेरों रासायनिक द्रव्यों का प्रक्रियाकरण निषिद्ध कर दिया है, इसके बावजूद, एण्ड-प्रोडक्ट सामानों के आयात में किसी कि स्म की रुकावट नहीं डालेगा। अस्तु, इसके लिए हम जो हैं तीसरी दुनिया के लोग, जहाँ न तो परिवेश के बारे में अतिरिक्त जिम्मेदारी है, न ही श्रमिकों

को उपयुक्त मज दूरी देना पड़ती है। यहाँ तक कि ख़र्च कम करने के इरादे से सुरक्षा की न्यूनतम व्यवस्था भी ठीक-ठाक ढंग से न की जाए, तो चलेगा। भोपाल इसका सबूत है। इसलिए कोई अपनी पूँजी लेकर आता है, यह सफेद झूठ है। पूँजी वे लोग अपने स्वार्थ, अपने मुनाफे के लिए लाते हैं। इन निवेशकों की दामाद जैसी ख़ातिर-तवाज ो में भारत की सभी 'राष्ट्रीय' पार्टियाँ और नेतागण, उनके संचालन के अधीन केन्द्र और राज्य सरकारें उमड़ पड़ी हैं। मसलन 'महाराष्ट्र उन्नयन काउंसिल' ने सन् 1998 की अप्रैल में प्रकाशित अपनी रिपोर्ट में कहा है पश्चिमी देशों में 'हरित क्रांति' की शक्ति-वृद्धि और परिवेश-प्रदूषण के विरुद्ध जनता का आक्रोश-आन्दोलन धीरे-धीरे उग्र होने के परिणामस्वरूप रंजक द्रव्यों के विश्व-बाज ार में प्रमुखता प्राप्त करने के लिए, भारत को एक सुनहरा मौका मिला है। एलायड कार्पोरेशन (वर्तमान एलायड सिग्नल), अमेरिका सायनामाइड (वर्तमान अमेरिकन होम प्रोडक्ट का एक हिस्सा) और दूँयूप जैसी कम्पनियों ने अब अमेरिका युक्तराष्ट्र में अपने-अपने रंजक द्रव्यों का उत्पादन बंद कर दिया है। सस्ते श्रम और शिथिलतर उद्योग-वर्ज्य-दूषण-सम्बन्धी क ानून के पूरे-पूरे सद्व्यवहार की जो विश्वव्यापी प्रवणता आज नज र आ रही है, उस पृष्ठभूमि में भारत के लिए एक विशेष 'आपेक्षित सुविधा' मौजूद है।' भारत के जन-गण के स्वास्थ्य, जीविका और परिवेश को तबाह करके, मुनाफा-वृद्धि की साजिश के तहत, बहुराष्ट्रीय रासायनिक द्रव्य उत्पादक संस्थाएँ आजकल जो हथकंडे अपनाये हुए हैं, उसमें भागीदार बनने के लिए, इस देश के शासकदलों में आपसी छीना-झपटी शुरू हो गयी है। बुद्ध बाबू ने तो यह ऐलान कर ही दिया है कि महाराष्ट्र के मुक ाबले, यह मौका खोने को वे हरगिज राज ी नहीं हैं।

पहले विश्व परिवेश और स्वास्थ्य-सम्बन्धी सवालों के दबाव से, जो परिस्थिति पैदा हुई है, उसकी रोशनी में यहाँ केमिकल हब स्थापन की परिकल्पना ख़ासतौर पर तात्पर्यपूर्ण है। दरअसल सरकार की कोई निर्दिष्ट विकास योजना नहीं है, यह बात इस परिकल्पना से साफ जाहिर है। माननीय मुख्यमंत्री ने एक बार भी यह स्पष्ट नहीं किया कि उनके प्रस्तावित हब में क्या-क्या बनेगा? निवेशक कौन-कौन लोग हैं? उनकी रसायन उपयोग की नीति क्या है? पूरी की पूरी नीति क्या निवेशक की मर्जी पर निर्भर होगी? यह सोच-सोचकर दिल काँप उठता है कि वे उन लोगों को सिर्फ ज मीन ही नहीं दे रहे हैं, बल्कि उन लोगों को इस विशेष अर्थनैतिक अंचल में आने के लिए आमंत्रित भी कर रहे हैं, जो देश के आम 'पोल्युशन कंट्रोल बोर्ड' की इख़्तियार में शामिल नहीं है। सुनने में आया है कि इस अंचल में देश का श्रम क ानून भी लागू नहीं होगा, हालाँकि इस कि स्म के उद्योग में श्रमिक सुरक्षा का सवाल,

सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। इसके अलावा, चूंकि रासायनिक कारख़ाने का कामकाज काफी ज ोखिमभरा है, इसलिए उन लोगों को अतिरिक्त भत्ता भी मिलना चाहिए। कई-कई क्षेत्रों में चूंकि इसका प्रभाव काफी सुदूर प्रसारी है, इसलिए यहाँ कार्यरत श्रमिकों के प्रति सरकार की दीर्घ-मियादी जि म्मेदारी बनती है। सबसे बड़ा सवाल यह कि यहाँ निर्मित द्रव्यों के इस्तेमालकर्ता कौन होंगे? यह जानना बेहद ज रूरी है। इसका लक्ष्य अगर अन्तर्राष्ट्रीय बाज ार है, तो वह सामाजिक मूल्य हम क्यों चुकायें? इसके अलावा रासायनिक उद्योग से निकलते हुए वर्ज्य के बारे में भी कई-कई सवाल उठते हैं। मसलन पहली दुनिया ने कारखानों से निकलते हुए वर्ज्य की मात्रा शून्य तक उतार लाने का फरमान जारी किया है। इस प्रसंग में हमारी सरकार की क्या नीति होगी, इसकी जानकारी अभी तक नहीं दी गयी है। एक मिसाल दी जाए, तो मुमकिन है कि वर्ज्य-सम्बन्धी समस्याओं पर विचार करना आसान होगा। अमेरिका में जिन तमाम अंचलों में खतरनाक मात्रा में वर्ज्य पदार्थ संचित होते हैं, उन सभी परित्यक्त इलाकों को 'सुपर फंड' नाम दिया गया है। सन् 2002 की जनवरी तक ऐसे उन्नीस इलाकों के लिए, अकेले ड्यूप ही उत्तरदायी था। इसलिए, वे समस्त ज मीनें, जो आजकल इस ढंग से, बिना कुछ समझे-बूझे, प्रदान की जा रही हैं उन समस्त ज मीनों का भविष्य क्या होगा, पहले यह जानना ज रूरी है। ज ाहिर है उन लोगों के व्यापारिक स्वार्थ की वजह से, उन विशेष अर्थनैतिक अंचलों में ऐसा उद्योग खड़ा करना आत्महत्या होगी।

विदेशी निवेशक आज आएँगे, कल चले जाएँगे। इतिहास यही सबक देता है। यह दृश्य बार-बार नज र आया है। ऐसे दृश्य अर्जेंटिना, मेक्सिको, दक्षिण-पूर्व एशिया में और अन्यत्र भी नज र आये हैं। यह तो इसका एक पक्ष है, आज के रसायन उद्योग का मुख्य प्रयोग-क्षेत्र है कृषि! और अधिक बेहतर ढंग से कहा जाए, तो कृषि-व्यापार में बीज, खाद, कीटनाशक, फफूँदनाशक, झाड़-झंखाड़नाशक वगैरह, फसल-पैदावार के प्राथमिक उपकरण के मुकाबले खेती के तरीके, विविधता, यहाँ तक कि इन्सान के खान-पान की आदत को आज के रसायन-उद्योग ने बदल डाला है। बाज ार में कौन-सी सामग्रियाँ उपलब्ध होंगी, कौन-सी नहीं; किस अंचल में कौन-सी खेती होगी, कौन-सी नहीं; कृषि-व्यापार के स्वार्थ के पक्ष में है या नहीं, इन सभी निर्धारण के पीछे भी कृषि-वाणिज्य ही है। रासायनिक संस्थाएँ, आजकल बीज कम्पनियों को बारी-बारी से ख़रीदती जा रही हैं या उनके साथ गठजोड़ कर रही है। जैसे मानसाण्टो! इन लोगों ने बीज सप्लायर, बृहद् व्यापारिक संस्था कार्गिल और डेकालव को ख़रीद लिया और अन्तर्राष्ट्रीय केमिकल और बीज व्यापार में अपना एकछत्र अधिकार

कायम कर लिया। हाल ही में डाउ और मानसाण्टो के बीच, एक संयुक्त प्रयास के तहत, पूरी दुनिया में कारोबार करने का समझौता हुआ है। उल्लेखनीय है कि अब, 'मानसाण्टो', 'डाउ ऐग्रीबिज नेस' वगैरह कम्पनियाँ इन दिनों बीज प्रयोगशाला में बीज भी तैयार करने लगी हैं। इस कि स्म की संस्थाएँ ही जैव-तकनीक के बारे में रिसर्च-कार्य में काफी पूँजी निवेश कर रही हैं। ये कम्पनियाँ प्रतिस्थापन का कौशल अपनाकर ऐसे-ऐसे बीज आविष्कार कर रही हैं, जो एक-एक निर्दिष्ट बीज के लिए निर्दिष्ट केमिकल निर्माण कर रही हैं। जैसे, पेस्टिसाइड, इन्सेक्टिसाइड वगैरह। इन सबको मिलाकर एक 'पैकेज' तैयार किया गया है। कोई भी किसान यह पैकेज इस्तेमाल करने को विवश हैं। इसके अलावा ये बीज, टर्मिनेटर बीज होते हैं। अर्थात् उत्पादित फसल से अगर बीज बटोरकर रखा जाये, तो उससे कोई नयी फसल नहीं प्राप्त होगी। किसान को हर साल बीज खरीदना पड़ेगा। दूसरी तरफ फसलों की बंटन-व्यवस्था में भी उन लोगों का ख़ामोश प्रवेश भी गौरतलब है। उदाहरण के तौर पर, रिलायंस कृषि व्यापार में विशाल पूँजी लगाने की तैयारी कर रहा है। अब वे लोग कृषि का खुदरा कारोबार करेंगे और यही लोग डाउ केमिकल के साथ संयुक्त उद्योग में शामिल होने को तैयार हैं। इस वक्त देशी-विदेशी उद्योग-समूह का व्यापारिक तालमेल और मूलधन तथा तकनीक का हर तरह से एकछत्र अधिकार का प्रयास, गौरतलब है। मसलन कृषि विपणन में सामने की तरफ सुनील मित्तल की भारती और पीछे की तरफ वालमार्ट! डाउ यहाँ आना चाहता है और उनके पक्ष में, भोपाल के बारे में सवाल करते हैं रतन टाटा! यह टाटा साहब ही इण्टो यू. एस. सी. ई. ओ. फोरम में भारत की तरफ से चेयरमैन हैं, जो फोरम ही दरअसल भारत में सभी अमेरिकी विनिवेश का कर्त्ता-धर्त्ता है! डाउ केमिकल्स के कर्णधार, एण्ड्रू लिवेरिस, इसी फोरम के अन्यतम सदस्य हैं। एक तरफ टाटा-अम्बानी-मित्तल, दूसरी तरफ डाउ, वालमार्ट, मानसाण्टो मुट्ठी भर चन्द समूहों का ऐसा व्यापारिक गठजोड़! ऐसे उदाहरण अनगिनत हैं। यही है भूमंडलीय युग की सामग्रिक तानाशाही। जाहिर है कि ऐसे निवेश के पीछे भूमंडलीय पूँजी का साम्राज्यवादी स्वार्थ छिपा है। इसके पीछे वर्ल्ड ट्रेड ऑर्गनाइजेशन या डब्लू. टी. ओ. के नियन्त्रणाधीन विभिन्न संघबद्ध राष्ट्र-शक्तियों का अपना-अपना स्वार्थ। उन्नयन के नाम पर ये नयी साम्राज्यवादी शक्तियाँ, एक तरफ आम लोगों की गर्दन घोंटने का प्रयास है, दूसरी तरफ अपने-अपने व्यक्तिगत मुनाफे में वृद्धि के प्रयास में, देश के तमाम हितों को तिलांजलि देकर, बिना सोच-विचार किये, प्राकृतिक सम्पदा जल, जमीन, जंगल, उनके विदेशी एजेंटों के जरिये, विदेशी बनियों के हाथ सौंपना चाहते हैं। इसमें देश

के विभिन्न राजनैतिक दल और देशी उद्योग संस्थाएँ भी शामिल हैं।

5. समापन-कथा

अब तक यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो चुकी होगी कि बाहर-बाहर से शांति की खोज चाहे जितनी भी जोर-शोर से की जाए, मगर अन्दर ही अन्दर चरम विपर्यय की तैयारी चल रही है। नन्दीग्राम में केमिकल हब नहीं बनेगा, इसलिए इन्सान निश्चिंत मन से सो सकते हैं, ऐसा नहीं है। केन्द्रीय सरकार की मदद से ज मीन की खोज ज ारी है। तलाश हो रही है हल्दिया और अन्यत्र भी! फिलहाल तो रक्षा हो गयी। लेकिन, इसलिए नन्दीग्राम, सोनाचूड़ा, भांगाबेड़ा, या खेजूरी इस विस्तृत अंचल की कोई भी खेती योग्य ज मीन या अन्य किसी जगह की कोई ज मीन या परिवेश भी, किसी भयंकर विपर्यय के हाथों से बच जाएगा या नहीं, इस बारे में कहीं, कोई निश्चयता नहीं है। यह सब कुछ अनिश्चित है। यथा, केमिकल हब, हल्दी नदी के इस पार बने या उस पार, कोई फक र्नहीं पड़ता। फक र्इस बात से पड़ता है कि केमिकल हब से निर्गत ज हरीला वर्ज्य कहाँ जा रहा है, जिस ढंग से जा रहा है, वहाँ कौन-कौन से सुरक्षा इन्तज ाम किए गए हैं। अंत में वह वर्ज्य कहाँ उँड़ेला जा रहा है, वहाँ अवशिष्ट विष-द्रव्य कितना मौजूद रहता है। अर्थात् सामग्रिक दूषण किस प्रकार नियन्त्रित किया जाएगा, किस हद तक नियन्त्रित किया जाएगा, किया भी जाएगा या नहीं ये तमाम सवाल अभी भी अनुत्तरित हैं। यह तो रसायन उद्योग है। यहाँ विराट मात्रा में जो भी खतरनाक विविध यौग तैयार किए जाएँगे, यहाँ से निर्गत होंगे असंख्य ज हरीले पदार्थ, जो परिवेश के लिए, श्रमिकों के स्वास्थ्य और सुरक्षा के लिए, आस-पास के अंचल के विराट जनसमूह के लिए सर्वनाशी हो सकता है। इसके अलावा, भोपाल की तरह ही विशाल दुर्घटना की संभावना भी मौजूद है। इसलिए नन्दीग्राम में हब नहीं बनेगा, अस्तु समस्या ख़त्म हो गयी, उस इलाके के लोगों की जान बच गयी यह बात इतनी आसान या सीधी-सादी नहीं है। तीखे प्रतिवाद के दम पर फिलहाल तो हम बच गये, मगर अन्दर ही अन्दर मुसीबत ज्यों की त्यों मौजूद है, जो और ज् यादा भयंकर और सुदूर प्रसारी है। जाहिर है कि औद्योगीकरण के नाम पर, किसी भी शर्त पर, किसी भी जगह, ऐसा जोखिमभरा और खतरनाक उद्योग गढ़ने की अनुमति नहीं दी जा सकती।

हम देख चुके हैं कि क्यूबाटाओ में क्या हुआ; जापान में रासायनिक दूषण ने कैसा भयंकर चेहरा इख्तियार किया था, वह भी हमारी नज रों के सामने है। ऐसे उदाहरणों का कोई अंत नहीं है। जहाँ समूची दुनिया में रसायन उद्योग-अंचलों की

यही परिणति है, यही दुर्दशा है, तब पश्चिम बंगाल जैसे जन-बहुल राज्य में या भारत जैसे जन-संकुल देश में, इस कि स्म का उद्योग-ताल्लुका गढ़ना किस हद तक उचित है? जहाँ सरकार के पास जन-साधारण की सुरक्षा सुनिश्चित करने का कोई उपयुक्त ढाँचा नहीं है, प्रकृत दूषण नियंत्रण का कोई इन्तज ाम नहीं है, वहाँ इस कि स्म की जोखिम भरी उद्योग-स्थापन की योजना न ही ग्रहण की जाए, यही वांछनीय है। यह बात भी गौरतलब है कि यहाँ भी सरकार, ब्राज ील के ढंग पर ही केमिकल हब तैयार करना चाहती है। विदेश से कच्चा माल आएगा, इस देश का जल, ज मीन और सस्ता श्रम इस्तेमाल किया जाएगा। मुख्यतः उन्नत देशों में, जो लोग अपने स्वास्थ्य के बारे में काफी सचेतन हैं, अपने परिवेश की रक्षा करने के बारे में काफी ज ोर-शोर से आवाज उठा रहे हैं। सच तो यह है कि पहली दुनिया के परिवेश-आन्दोलन के दबाव की वजह से ही, ऊँचे से ऊँचा मुनाफा क ायम रखने के लिए, विभिन्न बृहद् व्यापारिक संस्थाएँ, तीसरी दुनिया के विभिन्न देशों की तरफ दौड़ पड़ी हैं। वर्तमान यूरोप के नये रसायन-नियन्त्रण क ानून, उन लोगों को नयी-नयी जगहों की खोज के लिए लाचार कर रहे हैं। खैर, वे लोग नयी-नयी जगहें खोज रहे हैं, तो खोजने दें! लेकिन अपने देश में उन लोगों को खुद बुलाना, आत्महत्या की बात होगी। इसलिए यह केमिकल हब तैयार करने की योजना, हमें तत्काल ख़ारिज कर देनी चाहिए। पहले रसायन के इस्तेमाल की राष्ट्रीय नीति तो तैयार हो, यह तो तय हो जाए कि किन-किन द्रव्यों की हमें ज रूरत है; दूषण-नियंत्रण-व्यवस्था तो उन्नत हो।

जाहिर है कि वर्तमान रसायन उद्योग और कृषि-नीति में गहरा रिश्ता है। अर्थात् किस कि स्म की खेती-बारी की जाएगी, किस कि स्म के बीज इस्तेमाल किए जाएँगे, कितने-से जैव-उपादान, कितने-से रासायनिक उपादानों का इस्तेमाल होगा या इस्तेमाल होगा भी या नहीं वगैरह तमाम मुद्दे ही खेती-प्रणाली तय करेंगे। किसानों का फ ायदा इसी बात पर निर्भरशील है। खेती के लिए प्राथमिक उपकरण बीज, खाद, वगैरह अपने हाथ में मौजूद हो, तो एक बात है और अगर वह सब छीनकर, किसानों को यह समझाया जाए कि खेती अब फायदेमंद नहीं है, यह बिल्कुल और बात है। यानी उत्पादन-व्यवस्था के प्रधान उपकरणों में से, कितनी चीज ों का व्यवसायीकरण हो रहा है, यह बात कृषि-प्रधान देश के सामग्रिक विकास योजना पर निर्भर करेगी। चूंकि वर्तमान स्वीकृत सरकारी नीति में व्यावसायिक रासायनिक द्रव्यों का इस्तेमाल बढ़ रहा है, बीजों पर भी किसानों का स्वाभाविक अधिकार नहीं है, इसलिए खेती का ख़र्च भी बढ़ रहा है, और किसानों को खेती-बारी में लाभ भी कम हो रहा है। उन लोगों के लाभ का सिंहभाग अन्तर्राष्ट्रीय रसायन और बीज

कम्पनियों के हत्थे चढ़ जाता है और उन लोगों के लिए यह राह प्रशस्त कर रहा है, राज्य और केन्द्रीय सरकारों का सामूहिक प्रयास! दूसरी तरफ सरकार की तरफ से परिकल्पनाहीन शहरीकरण और कृषि-क्षेत्र को, और अधिक मात्रा में, रसायन उद्योग पर निर्भर बना देगा। शहर धीरे-धीरे विस्तृत होते जा रहे हैं, नतीजा यह है कि इन्सान और ज मीन का अलगाव बढ़ता जा रहा है। इस बारे में सरकार की कोई स्पष्ट धारणा है, ऐसा भी नहीं लगता। जो भी व्यापार-समूह, जहाँ कहीं ज मीन माँगता है, सरकार दे देती है, भले वह ज मीन सिंगुर में हो या डानकुनी में। वे लोग कहाँ, कौन-सा उद्योग स्थापित करेंगे, उसकी क्या ज रूरत है, उसकी सामग्रिक उन्नयन योजना में, इस निर्दिष्ट प्रकल्प की क्या भूमिका है, वह इस कदर अपरिहार्य क्यों है सरकार इस बारे में कोई जानकारी नहीं दे रही है। सारा कुछ मानो निवेशकों की मज ी पर ही निर्भर है। जो वे लोग चाहते हैं, वही होगा। असल में जुबान से, चाहे कोई भी, कुछ भी कहे, निवेश और निर्यात के ज रिये भूमंडलीकरण की धारा में ही सरकार द्वारा अपनाया गया, विकास का नक्शा, इसीलिए अन्तर्राष्ट्रीय वाणिज्य स्वार्थ पर निर्भर यह साम्राज्यवादी अग्रासन है। राज्य में केमिकल हब की स्थापना का प्रयास, इसी की ज्वलन्त मिसाल है। अगर सचमुच ही इसे वास्तविक रूप दिया गया, तो आगामी दिनों में कोई सामग्रिक विपर्यय अवश्यम्भावी है। इस देश का जो ढाँचा है और जो दूषण-नियन्त्रण व्यवस्था है, इससे भी बढ़कर दुनिया भर में बहुराष्ट्रीय बृहद् व्यापारिक संस्थाओं का जो इतिहास है, उन सबको सुनते-जानते-देखते हुए, यह बात अनायास ही कही जा सकती है कि यह शिल्प-ताल्लुका चाहे जहाँ भी गढ़ा जाए, उसे घेरे हुए, एक विस्तृत इलाका, जल्दी ही मरघट में बदल जाएगा। वहाँ की कृषि, खाद्य, जल, वायु, जन-व्यवस्था सभी कुछ आक्रान्त होगी। जब हालत बिगड़ी हुई नज र आएगी, तो आज के सभी मौसमी कबूतर, अपना-अपना व्यापार समेटकर चल देंगे। अपने पीछे ज हरीली वध्य-भूमि छोड़ जाएँगे। आज जो लोग जान-बूझकर या अनजाने में ही विदेशी बहुराष्ट्रीय संस्थाओं की उँगली के इशारे पर, ये शिल्प-इलाका स्थापित करने को आमादा हैं, वे सभी लोग अपने देशवासियों को भयंकर मुसीबत के मुँह में धकेल रहे हैं। औद्योगीकरण के नाम पर विकास की तमाम राह, स्थायी तौर पर अवरुद्ध कर देने को आमादा हैं।

हैरत की बात यह है कि यही सरकार बात-बात पर औद्योगिक-क्रांति के कहानी-किस्से भी सुनाती हैं। इसी विशृंखल औद्योगीकरण की राह पर, आज से दो सौ साल पहले, इंग्लैंड भी चला था। बिल्कुल कल्पनाहीन तरीके से गढ़ उठा था लंदन शहर! उस ज माने में भी भूमि और मानव के बीच क्रमिक अलगाव ने ही,

खेती को अपने स्वाभाविक पुष्टि के मूल उपादानों से वंचित कर दिया था। दूसरी तरफ, समूचे शहर में आवर्जनाओं का पहाड़ जम गया था, टेम्स नदी का पानी ज   हरीला हो उठा था। इसी की चरम परिणति थी   गुयानो का साम्राज्यवाद! पहले पेरू, उसके बाद चिली का समुद्र-तट दख़ल करने की लड़ाई, जिसका मूल लक्ष्य था   नाइट्रोजन-समृद्ध-गुयानो! लेकिन बहुतेरे लोग आज यह राह छोड़कर, विकल्प की कृषि-नीति के बारे में सोच-विचार करने लगे हैं। अब वे लोग यह सोचने में जुटे हैं कि किस तरीके से उत्पादनशीलता को क   ायम रखते हुए, अजैव रासायनिक खाद की निर्भरता को कम किया जाए। आज के नगर-शहर और उद्योग परिकल्पना, दो सौ साल पीछे की राह नहीं अपना सकती। परिवेश के बारे में, आज का इन्सान काफी कुछ जानकार हो चुका है। आज का विज्ञान भी बहुत ज्   यादा तथ्य-समृद्ध है। सभ्यता के इस असाधारण-अपूर्व अग्रगति के आलोक में, अब अगर कोई रसायन उद्योग-स्थापन के बारे में सोचे, उसे इस बात की साफ   -साफ   जानकारी देनी होगी की उसकी सामग्रिक परिकल्पना में उस उद्योग की कितनी ज   रूरत है; बनाये जाने वाले द्रव्य कौन-कौन से हैं; उनकी व्यवहार-नीति क्या है, जाहिर है कि व्यापार के स्वार्थ पर निर्भर कोई भी उद्योग-नीति, इतना कुछ नहीं सोचती। इसलिए जनाब मनमोहन सिंह या बुद्धदेव भट्टाचार्य साहब जुबान से भले कुछ भी कहें, सच तो यह है कि उन लोगों के पास कोई उन्नयन-योजना ही नहीं है। विकास के नाम पर ये लोग साम्राज्यवादी देशों की स्वार्थ-सिद्धि के लिए, भारत की जनता और समाज को दो सौ साल पीछे, किसी पिछड़े समाज में घसीट ले जाना चाहते हैं। सरकार द्वारा अपनायी गयी नीतियाँ, कम से कम यही संकेत दे रही हैं।

संदर्भ

1. www.Panna.Org.
2. www.Safe 2 use.com./pesticides/truelies.htm.
3. http :/www.Worldbank.Org/research/greening/cha5new.htm.
4. http :/www. Pvcinformation.Org/general/pvc Hazzardous Production.php.
5. www. michigan.gov/tittaha wassee.
6. Information Bulletin No. 4. Michigan Department of Environment.
7. www.ipt, india.org/main/ipt.php? I age=Inquiry&Report=4

8. www.Student for Bhopal.Org
9. http :/ www : pops. int/
10. http :/ ec. europa. eu/ environment/chemicals/reach/reach. intro. htm.
11. Reaching for 'Chemical Safety', *Environmental Health Perspective*, vol. 111, No. 14, Nov. 2003, Quality.
12. http :/ www. scorecard.org/chemical-groups/one-list.tel? short list tel? short list name = pop.
13. Jean-Tremblay, 'India's Policies thwart Chemical Industry', *International*, Aug. 17, 1998, Vol. 76, N0. 33.

सेज : एक सर्वनाशी सुनामी

इन्सान अब सिर्फ अपने जीवनधारण के उपाय ही नहीं, अन्दर ही अन्दर जीवन के लिए सुरंग खोदता जा रहा है। आजकल वह अपना ही शरीर, खुद ही भक्षण करने लगा है *(रवीन्द्रनाथ की The Robbery of the Soil शीर्षक रचना से उद्धृत)*

सुनामी या भूकम्प जैसी प्राकृतिक आपदाएँ, जात-पाँत, राजनैतिक राय-धारणाएँ, झंडे का रंग, कुछ भी नहीं मानतीं। वह तो बिना समझे-बूझे, बिना कोई फक ़र् किये, सारा कुछ ध्वंस कर देती हैं। हमारे राष्ट्रीय जीवन में आज इसी तरह की भयंकर सुनामी टूट पड़ी है और जो प्राकृतिक नहीं है, इन्सान ने खुद ही इसे रचा-गढ़ा है। इसका नाम है Special Economic Zone। हम इसे SEZ यानी 'सेज ' नाम से अभिहित करेंगे। रवीन्द्रनाथ का उपरोक्त उद्धरण, SEZ के संदर्भ में बिल्कुल सटीक बैठता है। अपनी देह खुद भक्षण करने की तरह ही इन्सान SEZ के माध्यम से अपने ध्वंस को खुद ही दावत देने को बेचैन हो उठे हैं। इस ध्वंस के बारे में लोगों को पहले ही आगाह करने की ज रूरत के तकाजे पर, यह पुस्तिका तैयार की गयी है।

नन्दीग्राम में हत्या और बलात्कारों की घटनाओं के बाद 'सेज ' के बारे में विभिन्न जगहों पर चर्चा हुई, आज भी हो रही है। आम लोगों को सिर्फ इतनी सी जानकारी हो पायी है कि 'सेज ' का मतलब है, विशाल इलाके में फैला हुआ, निर्यातनिर्भर उद्योग-ताल्लुका, जहाँ देश का कोई भी नियम-कानून लागू नहीं होगा और देश के अन्दर प्रायः एक विदेशी अंचल के तौर पर रचा-गढ़ा जाएगा।

विस्तृत चर्चा से पहले सेज के उद्भव के पीछे क्रियाशील अर्थनैतिक तत्त्वों की जानकारी दे दी जाए, तो इसका मूल उद्देश्य समझने में आसानी होगी।

सेज : आरम्भ कथा

सन् पचास के दशक से लेकर सन् अस्सी के दशक तक उन्नयनशील तीसरी दुनिया

के देशों में जो उद्योगनीति लोकप्रिय हो उठी थी, उसका मूल वक्तव्य यह था कि आयात राष्ट्र द्वारा नियन्त्रित होगी, ताकि विदेशी मुद्रा भंडार पर राष्ट्र का पूरा अधिकार रहे। राष्ट्रवादियों ने परामर्श दिया कि आयात के बजाय तीसरी दुनिया के देशों को अपने देश की विद्या-बुद्धि का सदुपयोग करते हुए, अपनी निजी तकनीक के विकास पर ज ोर दिया जाए। तीसरी दुनिया के देशों में इस अर्थनीति ने ज बर्दस्त तरीके से आत्मप्रकाश किया। लेकिन पूँजीवादी अर्थनीतिविद् वर्ग ने इसका समर्थन नहीं किया, क्योंकि इस अर्थनीति में राष्ट्र की प्रधानता ही स्वीकार की गयी थी, जो उन लोगों को हरगिज मंजूर नहीं थी।

रूस और पूर्वी यूरोप में समाजतंत्र के पतन के बाद, इन अर्थनीतिविदों ने यह अफवाह फैलायी कि राष्ट्र-नियन्त्रित अर्थनीति की अदक्षता ही, इस पतन का मूल कारण है। अब, उन लोगों ने निर्यातनिर्भर उन्नयन के तथ्य हाजि र किये, जिसका मूल वक्तव्य था कि आयात नीति ग्रहण करके, विदेशों से मशीनें, कच्चे माल और तकनीक लाकर, अगर अपने देश की सस्ती श्रम-शक्ति के ज रिये, सामग्री-उत्पादन किया जाये और उन्हें विदेशी बाज ारों में बेचा जाये, तो उससे प्राप्त धन से देश के विदेशी मुद्रा भंडार को सुदृढ़ किया जा सकता है और इस धन से दुबारा नये उद्योगों के लिए आवश्यक रसद संग्रह किया जा सकेगा।

इस काम के लिए सरकार को सिर्फ बाज ार व्यवस्था को मज बूत बनाने के लिए, कई तरह से प्रातिष्ठानिक व्यवस्था ग्रहण करनी होगी, बाकी काम देश के उद्योगपति और विदेशी पूँजी ही कर लेगी, औद्योगीकरण में लाभ की संभावना देखकर, विदेशी पूँजी ही धन जुटाने के लिए आ पहुँचेगी।

सन् 1989 में अमेरिका के प्रयासों से वाशिंगटन के इंस्टीट्यूट ऑफ लैटिन इंटरनेशनल इकोनॉमिक्स ने लैटिन अमेरिका के दस देशों के प्रतिनिधियों के साथ एक मीटिंग की और अमेरिका के ताबेदार, अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ-भंडार के दबाव पर ही, उन लोगों को अमेरिकी शर्त-मुताबिक निर्यातनिर्भर वाणिज्य के लिए सहमति देनी पड़ी। ज ोर-ज बर्दस्ती वसूल की गयी इस सहमति को, 'वाशिंगटन मतैक्य' (Washington Consensus) कहा जाता है।

वाशिंगटन मतैक्य की मूल शर्तें क्या थीं?

1. सरकारी टैक्स कम कराना होगा, क्योंकि सरकार कर, उन्नयन के लिए वसूल करती है। लेकिन इस मामले में उन्नयन की जिम्मेदारी सरकार की नहीं है, बल्कि गैर-सरकारी निवेशकों की है।

2. विदेशी निवेश पर से प्रातिष्ठानिक नियन्त्रण हटा लेना होगा।
3. गैर-सरकारीकरण। सरकारी प्रयास से जो सभी सस्थाएँ निर्मित हुई हैं, उन सबको गैर-सरकारी संस्थाओं को सौंप देना होगा।

सेज की चर्चा करते हुए, हम यह देखेंगे कि इसके पीछे 'वाशिंगटन मतैक्य' की मूलतः ये शर्तें सक्रिय थीं अर्थात् निर्यातनिर्भर सेज की मूल भावधारा, अमेरिकी पूँजीपतियों के दिमाग की उपज है। (*स्रोत : रतन खासनबीस : भूमंडलीकरण और उन्नयन*)

सेज कब से चालू हुआ?

उन्नत देशों द्वारा उद्भूत सेज की परिकल्पना, अब ज हरीले ड्रग के नशे की तरह अनुन्नत और उन्नयनशील राष्ट्रों के राष्ट्र नेताओं के दिमाग में भी बैठ गयी है। मानो उन्नयन का मतलब ही है सेज ! जैसे इससे पहले किसी देश में कभी उद्योग-विकास घटा ही नहीं। हमें यह भी याद रखना चाहिए कि पहले, दुनिया में कहीं कोई सेज नहीं था। उन्नयन का लोभ दिखाकर, उन्नत देश, तीसरी दुनिया के अनुन्नत और उन्नयनशील देशों का शोषण करने के लिए, लोगों को पंगु बना देने के लिए वहाँ के लोगों पर 'सेज ' थोप देने की कोशिश कर रहे हैं। इन अनुन्नत और उन्नयनशील राष्ट्रों की सरकार की तरफ से भी 'सेज ' के पक्ष में, जनसाधारण को क्रमिक रूप से यह समझाने की कोशिश की जा रही है कि 'सेज ' द्वारा, वे लोग पहली दुनिया के देशों की तरह ही हमेशा के लिए समृद्धशाली हो उठेंगे।

इस देश में नरसिंह राव के राज में, वित्तमंत्री मनमोहन सिंह के निर्देश पर ही राष्ट्र के नियन्त्रणहीन मुक्त-द्वार अर्थनीति को जगह दी गयी। लेकिन उन दिनों वामपंथी बुद्धिजीवी लोगों ने इस अर्थनीति का तीखा विरोध किया। सन् 2000 में एनडीए सरकार के वाणिज्य मंत्री, मुरासोली मरान, चीन से वापस लौट आने के बाद, इस देश में 'सेज ' गठन के लिए प्रयास करने लगे। इसके बाद सन् 2005 के मई महीने में वाम-समर्थित, वर्तमान यूपीए सरकार के राज में लोकसभा में 'सेज ' एक्ट, सर्वसम्मति से पास हो गया। वामपंथी-दक्षिणपंथी में वस्तुतः और कोई फक र्ि नहीं रहा। सभी लोगों ने सेज के पक्ष में एक स्वर में, कोरस-गान में, सुर मिला दिया।

लेकिन सर्वाधिक तात्पर्यपूर्ण विषय यह है कि इसके भी दो वर्ष बाद, सन् 2003 में पश्चिम बंगाल की वामपंथी सरकार ने मार्क्सवाद-विरोधी, इस सेज बिल को विधान सभा में पास करा लिया। (*स्रोत : प्रमिथ्युस की राह पर, प्रथम वर्ष, तृतीय संख्या, 2007, मार्च-मई*)

'सेज ' असल में है क्या?

'सेज ' एक्ट के मुखबंध में जो कहा गया है, उसका सार-मर्म यह है कि अब, भारतवर्ष दो अलग-अलग अंचलों में विभाजित हो गया एक है डोमेस्टिक टैरिफ और दूसरा 'सेज '। उद्योग मंत्रालय के वेबसाइट पर 'सेज ' की निम्नलिखित परिभाषा दी गयी है The SEZ is a Specially delien duty free enclave and shall be deemed to be foreign territory for the purpose of trade operation, duties of terrifs, अर्थात् SEZ एक विशेष चिह्नित इलाका है, जिसे वाणिज्य शुल्क और महसूल की पृष्ठभूमि में विदेशी भूखंड के तौर पर गिना जायेगा। यानी सेज , देश में बसा, एक खंड-विशेष होगा।

सेज का प्रशासनिक ढाँचा

1. सेज कानून के मुताबिक सेज तैयार करेगा डेवलपर! ये लोग इसका ढाँचा तैयार करेंगे और उत्पादन, सेवा या कारोबार चलाने के लिए उद्योगपतियों को सौंप देंगे। उदाहरण के तौर पर, नन्दीग्राम में जो केमिकल हब निर्माण के लिए नोटिस जारी किया गया था, वह भी एक सेज में ही अन्तर्भुक्त है। इस प्रस्तावित केमिकल हब का डेवलपर होना था, इण्डोनेशिया के कम्युनिस्ट नर-मेध से जुड़ा, सालिम समूह और वहाँ प्रस्तावित उत्पादकों में अन्यतम था, वियतनाम युद्ध में इस्तेमाल किए गए अमेरिकी नापाम बम-गैस की प्रस्तुतकर्ता संस्था, कुख्यात Dow Chemical Corporation, इस संस्था को Co-Developer यानी सह-विकासकर्ता बताया गया।
2. एस ई जे ड के संचालन के लिए जो 'सेज डेवलपमेंट ऑथरिटी' निर्मित होगी, उसमें कुल छह लोगों की कमिटी होगी। इस कमिटी में डेवलपर के दो प्रतिनिधि राज्य सरकार द्वारा नियुक्त, एक डेवलपमेंट कमिश्नर के अलावा तीन अन्य प्रतिनिधि होंगे। लेकिन एक-तृतीयांश में ही कोरम होगा। दो जन ही उपस्थित रहकर, कोई भी निर्णय ले सकेंगे। ग ौर करें, डेवलपर के दो प्रतिनिधि होंगे। इसलिए, ये लोग ही वस्तुतः सर्वशक्तिमान होंगे। इस तरह सबको, यहाँ तक कि राज्य सरकार की सभी राय-मतों की उपेक्षा करके, अपने स्वार्थ में, सारे फैसले लेने के अधिकार को, कानूनी स्वीकृति दे दी गयी। सेज के अधिवासियों का कोई प्रतिनिधि उसमें शामिल नहीं किया जाएगा और केन्द्र-राज्य सरकार का कोई नियन्त्रण नहीं चलेगा। (*स्रोत : प्रमिथ्युस की राह में, मार्च-मई, 2007*) संशोधित केन्द्रीय नीति मुताबिक सेज का 50

प्रतिशत उद्योग-उत्पादन के लिए इस्तेमाल किया जाएगा, 25 प्रतिशत सेवा के लिए और बाकी 25 प्रतिशत रीयल-इस्टेट, आवास वगैरह के लिए। सेज का सर्वाधिक क्षेत्रफल होगा 5000 हेक्टेयर। (*आभार : वर्तमान, 17 फरवरी, 2007*)

सेज की दृश्यावली कैसी होगी?

अमेरिका के एक पदस्थ अफसर, डॅगलग पाइक ने अपने सेज -सम्बन्धी रिसर्च में लिखा है

वियतनाम युद्ध के समय, दक्षिण वियतनाम में जिस तरह काँटा-तारों से घेरकर स्ट्रेटेजिक हैमलेट तैयार किया गया था, उसके घेरे में आदिवासियों की गतिविधियाँ नियन्त्रित थीं, सेज की दृश्यावली भी लगभग वैसी ही होगी ऊँचे-ऊँचे प्राचीर या काँटा-तारों से घिरा, क ैदखाने जैसा सीमाबद्ध बंद अंचल, जिसके साथ देश के लोगों और उनके समाज का कोई वास्ता नहीं होगा। रवीन्द्रनाथ ने अपने नाटक, 'रक्तकरबी' में जिस यक्षपुरी का विवरण दिया है, इसकी तुलना शायद संभव है। यहाँ इन्सान का कोई स्वतंत्र परिचय नहीं है; यहाँ वह सिर्फ मुनाफा उत्पादन की एक निपट निर्जीव मशीन भर है। (*स्रोत : वर्तमान, 5 मई, 2007*)

ऊँची चारदीवारी से घिरी 110 एकड़ जमीन पर स्थित कोचीन के विशेष अर्थनैतिक अंचल में जन-साधारण को प्रवेशाधिकार नहीं है। कोचीन के दक्षिण अंचल में स्थित नौ-सेना अड्डे से भी सेज के निषिद्ध अंचल में प्रवेशाधिकार पाना ख़ासा मुश्किल है। (अपडेट, अंक 13)

सेज क ानून की चंद उल्लेखनीय धाराएँ

1. सेज क ानून के दूसरे अध्याय की धारा संख्या 2 के मुताबिक कोई भी उद्योगपति, कोई भी अंचल (घनी बस्तीवाली या बहुफसली, चाहे जैसी भी ज मीन हो) सेज के लिए चुन सकता है। सेज की प्रस्ताव समीक्षक कमिटी, उसके अनुमोदन के लिए प्रायः विवश होगी। अर्थात् 'सेज ' में किस प्रकार का उद्योग स्थान पा सकता है, सिर्फ यही बात कमिटी के विचाराधीन है, जगह के चुनाव के मामले में, कमिटी को निपट अधिकारहीन रखा गया है। यानी अपनी निजी ज मीन जमा, अपनी भूमि-थान, खेत-खलिहान पर वस्तुतः किसी का भी कोई अधिकार नहीं होगा। (*स्रोत : वर्तमान, 5 मई, 2007*)
2. धारा 011 के मुताबिक सेज इलाका, डेवलपमेंट कमिश्नर के अधीन होगा और वही तमाम प्रशासनिक क्षमता का अधिकारी होगा।

3. चौथे अध्याय की धारा 23 में कहा गया है कि सेज से जुड़े सभी मामलों के विचार के लिए, विशेष अदालत का गठन किया जाएगा। सेज अंचल के दीवानी मामलों का विचार, आम अदालत में नहीं किया जाएगा। अर्थात् 'सेज ' राष्ट्र की विचार-व्यवस्था के बाहर का एक इलाका होगा।
4. सबसे भयंकर है 49 नं. धारा, जिसमें कहा गया है कि महज एक नोटिस भर देकर कोई एक या सभी सेज की पलक, झपकते, केन्द्रीय क ानून से बाहर ले आया जाएगा। अर्थात् सेज अंचल में भारतीय संविधान का कोई भी कानून नहीं चलेगा। भारत के अन्दर रहते हुए भी, वस्तुतः यह भारत से बाहर का एक इलाका होगा।
5. राज्य पुलिस उस इलाके में तभी दाखिल हो सकती है, जब डेवलपमेंट ऑथरिटी उससे मदद देने का अनुरोध करे। अर्थात् डेवलपमेंट ऑथरिटी के अनुमोदन से वहाँ अनेक तरह के अपराधमूलक कामकाज भी चल सकते हैं, जिस बारे में पुलिस-प्रशासन को कुछ करने का कोई अख्तियार नहीं होगा। (*स्रोत : The Gazette of India, no. 31, 23 June, 2005 : Business World, 13 Nov., 2006*)
6. 50 नं. धारा में कहा गया है कि सेज में काम करने वाले श्रमिकों को पेंशन, मातृत्व-छुट्टी, काम करते-करते अक्षम होने पर क्षतिपूरण वगैरह कुछ भी नहीं मिलेगा।

सेज क ानून की विभिन्न धारा में उद्योगपतियों को अबाध अर्थनैतिक सुविधाएँ देशी-विदेशी बृहद् पूँजीपतियों के लिए, सेज नामक हरि-लूट का इन्तज ाम किया गया है, इस संदर्भ में सेज की 26 (1) धारा मुताबिक, उद्योगपति वर्ग, अपना मुनाफा बढ़ाने के लिए, उत्तरोत्तर जो सुयोग सुविधाएँ प्राप्त करेंगे, उनका विवरण निम्नलिखित है

1. आयात की जाने वाली सामग्री और सेवा के मामले में कस्टम्स एक्ट मुताबिक अन्यान्य कारोबारी-व्यापारियों के लिए जो शुल्क निर्धारित किये गये हैं, वे सब इस मामले में पूरी तरह माफ होंगे।
2. उस क ानून मुताबिक निर्यात शुल्क भी पूरी तरह माफ होंगे।
3. सामग्री और सेवा आयात करने के लिए सेंट्रल एक्साइज एक्ट मुताबिक जो अन्तः शुल्क निर्धारित किए गए हैं, उससे भी सेज को रिहाई दी जाएगी।
4. सेज इलाके में जो बिजली सप्लाई की जाएगी, उस पर राज्य विद्युत कमीशन का कोई नियन्त्रण नहीं होगा। बिजली उत्पादक कम्पनी, ज रूरत मुताबिक

उनका मूल्य निर्धारित करेगी और केन्द्र या राज्य सरकार उस पर कोई टैक्स नहीं लगा सकेगी।

5. 'सेज ' को सभी प्रकार के विक्रय-कर से मुक्त रखा जाएगा। हालाँकि प्रायः दस वर्ष पहले, बंद कल-कारखानों के श्रमिकों ने समवाय के माध्यम से बंद कल-कारखानों को चालू करने के लिए, कुछ दिनों के लिए, जब सरकार से विक्रय-कर में छूट माँगी थी, तो सरकार ने जवाब दिया था 'विक्रय-कर क ानून (1916) मुताबिक, यह छूट देना संविधान-विरोधी है।' सेज के संदर्भ में पूरा का पूरा विक्रय-कर माफ कर देना, संविधान-विरोधी क्यों नहीं है, इस सवाल के जवाब में वामपंथी बिल्कुल चुप हैं।
6. पहले पाँच वर्ष तक उद्योगपतियों को कोई आयकर नहीं देना होगा। उसके बाद के पाँच वर्षों में प्रदेय आयकर पर 50% छूट दी जाएगी।
7. सेज का डेवलपर पानी बिजली समेत जिस कि स्म के ढाँचे को अपनी ज रूरत बताकर, उन पर अपना दावा करेगा, राज्य सरकार वह पूरा-पूरा, बिना कोई मूल्य लिये, देने को लाचार होगी। (*स्रोत : वर्तमान, 5 फरवरी, 2007*)

उद्योगपतियों को जो शुल्क या कर छूट दी जाएगी, वह राशि जन-साधारण पर तरह-तरह के टैक्स थोपकर, वसूल कर लेगी, इसलिए जनता के पैसों से ही, उद्योगपतियों के मुनाफे की थैली और ज यादा फल-फूल उठेगी।

'सेज ' के फलस्वरूप होने वाले नुकसान का विवरण

राज्य सरकार और उद्योगपतियों की तरफ से 'सेज ' को इस ढंग से सजाकर पेश किया जा रहा है, मानो इसके फलस्वरूप देश में उन्नयन का सैलाब उमड़ आएगा। लेकिन, दरअसल देश के लोगों को कितने भयंकर नुकसान का सामना करना पड़ेगा, इसका एक संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है

1. उच्छेद और नौकरी का अकाल

'सेज ' के शिकंजे में फँसी कृषि-ज मीन और जन-बस्तियों के इलाके, विपुल परिमाण में निश्चिह्न होते जाएँगे। हम अपने राज्य की ही बात करें सिर्फ नन्दीग्राम में ही प्रस्तावित केमिकल हब बनाने के लिए सालिम समूह को 14,500 एकड़ ज मीन लेने की बात थी। इसके फलस्वरूप सरकारी हिसाब से ही 15,000 परिवारों को अपनी-अपनी जगह-जमीन, अपनी-अपनी जीविका गँवा देना पड़ती। इतने सारे लोगों का भविष्य अनिश्चित और अन्धकारमय हो जाता। (*स्रोत : आजकल, 10 दिसम्बर, 2006*)। सन्

1991 की जनगणना के मुताबिक कुलपी में कुल मिलाकर 1,31,903 लोग बेघर हो जाते। अब, यह संख्या निश्चित रूप से बहुत ज यादा बढ़ गयी होगी। इसके अलावा अनगिनत स्कूल, स्वास्थ्य केन्द्र, हाट-बाज ार वगैरह ध्वंस हो जाते। (*स्रोत : प्रमिथ्युस की राह में, अंक तृतीय, 2002, मार्च-मई*)

राज्य में उद्योग के लिए जिस 1,40,000 एकड़ जमीन अधिग्रहण की बात चल रही है, उसकी वजह से प्रायः 25,00,000 प्रान्तिक लोग घरच्युत और जीविकाच्युत हो जाएँगे। काफी समय लगाकर गढ़ा गया स्थायी वास्तुतन्त्र, एकबारगी ध्वंस हो जाएगा, जो प्रत्यक्ष या परोक्ष ढंग से इतने सारे लोगों के जीवनयापन में सहायक था। (*आभार : दैनिक स्टेट्समैन, रविवार, 31 दिसम्बर, 2006*)

> सिर्फ और सिर्फ अ-कृषि ज मीन पर 'सेज ' निर्माण करना होगा और कृषि ज मीन अधिग्रहण को निरुत्साहित करना होगा। (पीपुल्स डेमोक्रेसी, सीपीएम का मुखपत्र 29 अक्टूबर, 2006)

हालाँकि सरकार की तरफ से व्यापक रोज गार और नौकरी के पक्ष में ज बर्दस्त वकालत की जा रही है; कहा जा रहा है कि इसके फलस्वरूप ढेरों लोगों को काम करने का मौका मिलेगा। लेकिन हमारे लिए यह जान लेना ज रूरी है कि वहाँ थोड़े-से लोगों को कामकाज या नौकरी मिल जाएगी, मगर इसकी तुलना में जितने लोग वृत्तिच्युत और कर्मच्युत होंगे, उनकी संख्या बहुत ज यादा है। अपनी ज मीन-माटी, अपने समुदाय, अपने समाज से उजड़े हुए, इतने सारे लोगों के लिए नया घर बना देने की सदिच्छा और क्षमता, राष्ट्र के लिए संभव नहीं है, इसलिए इतने सारे लोग स्रोत में बहती-उतराती काई की तरह भटकते रहेंगे। योजना आयोग के अनुसार ही आज ादी के बाद, देश में विभिन्न उन्नयन योजनाओं के लिए, ज मीन हथिया लेने की वजह से लगभग 50 लाख परिवारों को उजड़ जाना पड़ा। सच तो यह है कि इनमें से 20 प्रतिशत लोगों का भी पुनर्वास नहीं हुआ। अब फलतः मुक्त वाणिज्य अंचल को ही लिया जाए। सन् 1984 में जहाँ 270 एकड़ ज मीन अधिग्रहण की नोटिस जारी की गयी थी, इसमें से 200 एकड़ ज मीन किसानों की थी। बाकी वास्तु ज मीन थी। कृषि ज मीन और वास्तु दोनों ही गँवा देने वाले किसानों की संख्या थी 640। इनमें से 20 प्रतिशत लोगों को मुआवजे में कानी कौड़ी भी नहीं मिली। हल्दिया पेट्रो-केमिकल्स की भी वही तस्वीर! पुनर्वासन की इन घटनाओं से ही वास्तविक तस्वीर स्पष्ट हो जाती है। (*स्रोत : अमल सरकार, उच्छेद और प्रतिरोध*)

> आन्ध्रप्रदेश के विशाखापत्तनम् जिला के अराकू आदिवासी अंचल में, एक विराट जनसभा में सीपीएम की पॉलितब्यूरो सदस्य, वृंदा करात ने एक विराट जनसभा में,

अपने भाषण के दौरान इस तथाकथित उन्नयन-प्रक्रिया की तीखी समालोचना की थी, जिस क्रिया के फलस्वरूप, दरिद्र, दलित और आदिवासियों को अपनी ज मीन से उखड़ जाना पड़ा। श्रीमती करात ने इस श्रेणी के लोगों का आह्वान करते हुए, इस 'उन्नयन' के खिलाफ डटकर मुक ाबला करने को कहा था। (पीपुल्स डेमोक्रेसी, सीपीएम का मुखपत्र, 5 दिसम्बर, 2006)

2. खाद्य संकट

सेज के लिए, अन्यान्य राज्यों की तरह, हमारे राज्य में भी एक-फसली और निश्चित रूप से यहाँ तक कि तीन-फसली, चार-फसली ज मीन भी ली जाती रहेगी, जैसे सिंगुर में ज मीनें ली जा रही हैं (सेज न होने के बावजूद); जैसे राजारहाट, नन्दीग्राम में जमीनें ली जाने वाली थीं; जैसे भांगर, बारासात, कुलपी में ज मीनें लेने की तैयारियाँ चल रही हैं। भू-तत्त्वविदों की रिपोर्ट मुताबिक, गांगेय की पोली मिट्टी से निर्मित ये अंचल समूची पृथ्वी पर उर्वरतम स्थान माने जाते हैं। औद्योगीकरण के लिए बलि होने जा रहा है, यहाँ का यह विस्तृत कृषि अंचल, सिर्फ सरकार की लापरवाही विचारहीनता और अविवेक की वजह से। इस राज्य में पहले 54 लाख हेक्टेयर कृषि-ज मीन थी, जो विभिन्न कारणों से घटते-घटते, अब कुल 44 लाख हेक्टेयर ही रह गयी है। साल में 50 हजार एकड़ के हिसाब से ज मीन का परिमाण ह्रास के मुँह में जा रहा है, हालाँकि दूसरी तरफ जनसंख्या क्रमशः बढ़ती जा रही है। अब, 1,40,000 एकड़ ज मीन अगर सेज के दायरे में चली गयी तो डेढ़ लाख टन खाद्य-फसल की पैदावार कम हो जाएगी। (*आभार : दैनिक स्टेट्समैन, 31 दिसम्बर*)। हमारे देश में वैसे भी खाद्य-फसल का संकट है। अन्तर्राष्ट्रीय मानदंड मुताबिक जहाँ फी व्यक्ति 309 के जी खाद्य-फसल की पैदावार ज रूरी है, वहाँ भारत में पैदावार, फी व्यक्ति कुल 200 के जी है। इस स्थिति की अहमियत का सहज ही अन्दाजा लगाया जा सकता है। वैसे भी खाद्य-फसल की कमी और अनाहार, हमारे राज्य में पहले से ही मौजूद है। इन दिनों नेशनल सैम्पल सर्वे की एक समीक्षा प्रकाशित हुई है कि भारतवर्ष में विभिन्न राज्यों में भूखे लोगों की संख्या कितनी है। एन. एस. एस. ए. की यह 61वीं समीक्षा, जुलाई, 2004 में की गयी थी। इस समीक्षा के अनुसार पश्चिम बंगाल की जनसंख्या का प्रायः 12 प्रतिशत अर्थात् प्रायः 72 लाख लोग अनाहार या स्वल्पाहार रहकर, भूखे रहकर हर रात यूँ ही सो जाते हैं। (*स्रोत : दैनिक स्टेट्समैन, 3 जुलाई, 2007*)। 10 सितम्बर 2005 को 'दाल' फसल पर आयोजित एक कार्यशाला में, राज्य सरकार के मुख्य सचिव और कृषि सचिव

के वक्तव्य के तौर पर, 'गणशक्ति' अखबार में यह छपा था कि इस राज्य में दाल और खाद्य-तेल की काफी कमी है। दाल की माँग 12 लाख टन है, जबकि पैदावार कुल 2.12 लाख टन ही है; तेल बीजों की माँग 13.68 लाख टन है, जबकि उत्पादन कुल 6.52 लाख टन है। इन दोनों फसलों को मिलाकर कुल कमी 17.04 लाख टन है। 11 जुलाई, 2006 को गणशक्ति में कहा गया था कि गेहूँ की कमी 10 लाख टन है। यानी जाहिर है कि कुल कमी का परिमाण 27.4 लाख टन ठहरता है। यह परिमाण कहीं से कम तो नहीं है। सन् 2005-2006 की आर्थिक समीक्षा के अनुसार, राज्य सरकार ने केन्द्रीय सरकार से इन 12 महीनों में 26.46 लाख टन खाद्यान्न प्राप्त किया। (चावल 7.26 और गेहूँ 19.20 लाख टन)। इतनी कमी के बावजूद कृषि-ज मीन अगर ध्वंस करते रहे, तो खाद्य-संकट और अधिक बढ़ जाएगा। इसमें कोई शक नहीं है। (*आभार : वर्तमान, 28 जनवरी, 2007*)। औद्योगीकरण के एक अलीक नशे में मदमस्त होकर, हम क्या अपने को खाद्य के लिए, धीरे-धीरे परनिर्भर बना लेंगे? इस संदर्भ में यह उल्लेख करना भी ज रूरी है कि राष्ट्रीय कृषि आयोग के चेयरमैन, मशहूर अन्तर्राष्ट्रीय कृषि वैज्ञानिक, डॉ. स्वामीनाथन ने कृषि-जमीन यूँ तबाह करके, थोक दर से सेज गठन का तीखा विरोध किया है। उन्होंने कहा है इसके फलस्वरूप देश खाद्यान्न के मामले में परनिर्भर हो जाएगा, जो असल में सार्वभौमिकता गँवाने के बराबर है। सन् 1954 में भारत में खाद्यान्न भेजने के लिए अमेरिका से जो पी एल 480 समझौता किया था, उस प्रसंग में अमेरिकी सेनेटर सदस्य, हमफ्रे ने प्रसन्नता जाहिर करते हुए कहा खाद्यान्न के लिए लोग हम पर निर्भरशील हों, यह हमारे लिए काफी उत्साह की बात है, क्योंकि कुछ भी करने से पहले लोगों को आहार तो चाहिए ही। (*आभार : दैनिक स्टेट्समैन, 2 फरवरी, 2007*)

कुछ लोगों ने यह आशंका भी जाहिर की है कि देशी-विदेशी पूँजीपतियों के ज रिये इन समस्त उन्नयनशील देशों में व्यापक तरीके से कृषि-ज मीनें उजाड़कर, सेज की प्रतिष्ठा करने को अमेरिका का परिकल्पित षड्यन्त्र है ताकि भविष्य में उन्नत देशों से अनुन्नत और उन्नयनशील देश खाद्य खरीदने को विवश हो जाएँ। बहुत से लोगों का ख़याल है उन्नयन के नाम पर इन तमाम देशों को खाद्य के मामले में परनिर्भर बनाना, उन लोगों की सुदूर प्रसारी, परिकल्पित साजिश है।

3. राजस्व-घाटा

सेज के फलस्वरूप सरकार को राजस्व-वसूली में विपुल मात्रा में घाटा होगा। नेशनल इंस्टीट्यूट की पब्लिक फिनान्स एण्ड पॉलिसी (N I P F P) की समीक्षा मुताबिक

टैक्स वसूली में कुल गिरावट होगी 1 लाख करोड़ रुपये; जहाँ केन्द्र का अनुमान है कि टैक्स वसूली में 4 लाख 50 हज ार करोड़ रुपये अर्थात् कुल राजस्व में प्रायः 20 प्रतिशत राजस्व का घाटा होगा। जाहिर है कि इसका नतीजा यह होगा कि जन-सेवा के क्षेत्र में सरकारी ख़र्च के लिए अनुमोदित रकम में निश्चित रूप से गिरावट आएगी। यानी बहुजातीय संस्था के क्रमिक मुनाफे के लोभ की कीमत, देश के असंख्य आम लोग चुकायेंगे। (*आभार : प्रमिथ्युस की राह में, अंक तृतीय, 2007, मार्च-मई*)

4. भयंकर श्रमिक शोषण

यह बात पहले ही बतायी जा चुकी है कि देश के अन्यान्य अनेक कानूनों की तरह श्रम कानून भी सेज के मामले में लागू नहीं होगा और चूंकि सस्ती श्रम-शक्ति ही सेज में मुनाफे का प्रमुख उपाय है, इसलिए कम मजूरी में अधिक श्रम वसूल करने के लिए, श्रमिकों को यहाँ तरह-तरह की सुयोग-सुविधाओं से कैसे वंचित रखा जाएगा, इसका विवरण नीचे दिया जा रहा है।

(क) जिस तरह हम फि ल्मों में नाज ी कॉन्सेंट ्रेशन कैम्प की तस्वीरें देखते हैं, यहाँ भी उसी तरह किसी मज दूर को अन्य किसी मज दूर से बात तक करने का अधिकार नहीं होगा, क्योंकि इससे श्रम-समय बर्बाद होगा, फलस्वरूप मुनाफे में कमी आएगी।

(ख) प्राकृतिक कर्म से निपटने के लिए, एक बार से अधिक बाथरूम जाने तक की मनाही होगी। टिफिन-टाइम के अलावा, बाथरूम बंद ही रहेगा। प्राकृतिक कार्य से निपटने के लिए कार्यस्थल में बैग झुला दिए जाएँगे। अर्थात् वहाँ इन्सान उत्पादन की अमानविक मशीन से ज् यादा और कुछ नहीं होगा।

(ग) सर्वत्र काम का समय, काफी लम्बा होगा। 12 घंटे से 16 घंटे! किसी कि स्म का ओवर टाइम भी नहीं होगा।

(घ) माँ बन जाने के बाद आमतौर पर महिला श्रमिकों की निर्ममता से छँटनी कर दी जाती है। इसलिए महिला श्रमिक गर्भवती होने पर, उनके गर्भपात की कोशिश की जाती है।

(ङ) श्रमिक बस्तियों की अपरिसर जगहों में श्रमिकों को ठुँसकर रहना पड़ता है। श्रीलंका में श्रमिक-डॉरमिटरी में इतनी भीड़ रहती है कि फर्श पर कार-पार्किंग के निशान की तरह, डेढ़-डेढ़ हाथ के फासले पर सफेद निशान लगाकर, उनके सोने की जगह निर्दिष्ट कर दी जाती है। कामकाज की कोई सुरक्षा नहीं,

इसलिए श्रमिक भी इस कि स्म की पाशविक शृंखला क बूल कर लेते हैं। सेज में श्रमिक-शोषण अन्तर्राष्ट्रीय है। इसीलिए केनिया में अत्याचार का शिकार श्रमिक Grace Nyacko की आवाज के साथ इस देश के कोचीन के सेज -श्रमिक, साजिथा की आवाज एकमेक हो जाती है। Nyacko कहते हैं कपड़ों की फांस अपनी साँसों के साथ खींचते-खींचते, मुझे साँस की गंभीर बीमारी हो गयी है, लेकिन डॉक्टर के पास जाने का कोई उपाय नहीं है, क्योंकि मुझे छुट्टी नहीं है। साजिथा कहते हैं ऐसे बहुत कम दिन गुजरते हैं, जब मुझे रोना नहीं पड़ता।

मानो यही स्वाभाविक भी है, क्योंकि वे लोग इन्सान तो हैं नहीं, वे लोग तो उत्पादन की एक-एक मशीन मात्र हैं।

'सेज ' क ानून में उन लोगों को मशीन समझना, नैतिक रूप से स्वीकृत है। (*आभार : प्रमिथ्युस की राह में, 2007, मार्च-मई*)

> कोचीन सेज में कुल श्रमिक संख्या का 55ः हिस्सा ही समझौते की शर्तों के तहत नियुक्त किया गया है। उन लोगों को स्थायी श्रमिक बनने का कोई मौका उपलब्ध नहीं है। (अपडेट, अंक 13)

चीन के विकास के जिस मॉडल के नक्शे-क दम पर चलते हुए हमारी राज्य सरकार चल पड़ी है उसी चीन के उपकूलवर्ती इलाके के अंचलों में श्रमिकों का धीरे-धीरे अभाव नज र आने लगा है। 'सेज ' के अन्तर्गत कारखानों में जो अमानवीय शोषण जारी है, वह सब झेल पाने में असमर्थ झुंड के झुंड श्रमिक अब दुबारा अपने-अपने गाँव-शहर के क्षेत्रों में वापस लौट रहे हैं। (*स्रोत : चीन में श्रमिक श्रेणी की हालत, रॉबर्ट गुरेली, मंथली रिव्यू*) इसलिए सालोंसाल संघर्ष और रक्तपात के मोल पर श्रमिक वर्ग ने पूँजीपतियों से जितने भी मानवाधिकार वसूल करने में सफलता प्राप्त की थी, उन्नत और अनुन्नत देशों में सेज के जरिये, वे सभी अधिकार छीन लेने में, ये पूँजीपति वर्ग दुबारा सचेष्ट हो उठे हैं।

5. परिवेश-दूषण

'सेज ' का जो सबसे भयंकर पक्ष है, वह है, परिवेश-दूषण। चूंकि 'सेज ' एक स्वशासित इलाका है, इसलिए समूचे देश में परिवेश सम्बन्धी जो आम नियम कानून हैं, अब भी 'सेज ' के क्षेत्र में लागू नहीं होंगे। फलस्वरूप पर्यावरण को प्रदूषणमुक्त रखने का कोई दायित्व 'सेज ' वालों का नहीं होगा। केमिकल हब के मामले में इसका कुप्रभाव भयंकरतम है। केमिकल हब के कारखाने से निकलनेवाले वर्ज्य पदार्थ किस

हद तक भयावह विपर्यय ला सकते हैं, इसका ज्वलन्त निदर्शन है, ब्राज ील की रसायन उद्योगनगरी क्यूबाटाओ। सन् सत्तर के दशक में विदेशी निवेश के ज्वार में एक रासायनिक-उद्योग-ताल्लुका निर्मित हुआ। वहाँ जलपथ, स्थलपथ की आरामदेह व्यवस्था थी। उसके साथ जोड़ी गयी थी, अनियन्त्रित उद्योग-नीति, सस्ती मज दूरी, अगाध टैक्स-छूट और नाममात्र मूल्य में ज मीन। इतने सारे मिश्रण के फलस्वरूप सर्वोच्च मुनाफे की गारंटी पाकर, ब्राज ील निवेशकों की अबाध लूट का लीलाक्षेत्र बन गया था काफी कुछ आजकल के पश्चिम बंगाल या समस्त भारतवर्ष की तरह! उन दिनों क्यूबाटाओ को ब्राज ील की केमिकल राजधानी या रासायनिक कैपिटल कहा जाता था। कुल एक दशक के अन्दर-अन्दर, वही शहर मौत की घाटी में बदल गया। क्यूबाटाओ को अब Valley of Death 'मृत्यु घाटी,' कहा जाता है। वहाँ की पर्वतमालाओं से घिरे वन-जंगल तबाह हो गए; जीवन्त नदियाँ मृत जलधारा में बदल गयीं; नदियों के गर्भ में अब किसी जीव की जान नहीं बची, बच रहा, जहरीला पानी और चंद जलज जीव। शहर की वाताश में ज हर घुलमिल गया। वहाँ की माटी, जमीन, जंगल ज हरीले हो उठे। दिन के समय भी आकाश अंधकारमय! रह-रहकर एसिड-वृष्टि। चारों तरफ रोग और व्याधि। इलाके के अधिकांश लोग यक्ष्मा, कैंसर, हँफनी जैसे दिल के रोग के शिकार हो गए। अन्त में खोखले दिमागवाले मानव-शिशु पैदा होने लगे, जैसा पहले कभी नहीं हुआ। प्रशासन समूचे इलाके को जनशून्य कर देने को लाचार हो उठा। सिर्फ ब्राज ील ही क्यों, ऐसा इतिहास सर्वत्र बिखरा पड़ा है। खुद अमेरिका के मिशिगन, मिडलैंड को ही लें। टिटाबावासी नदी का पानी, यहाँ तक कि उसके धरातल तक को, विश्व के अन्यतम रासायनिक द्रव्य प्रस्तुत संस्था डाउ केमिकल ने ज हरीला बना डाला। नन्दीग्राम में वही लोग केमिकल हब बनाने वाले थे। हल्दिया पेट्रोकेमिकल सम्बद्ध सेज निर्माण की बातचीत चल रही है, लेकिन एक अहम विषय पर विचार नहीं किया जा रहा है कि ये सब भयंकर नुकसानदेह रासायनिक मिश्रण, कैंसर का शिकार बना सकते हैं। या कोषविभाजन के भी कारण बन सकते हैं, जो प्रजनन के लिए बेहद नुकसानदेह है। पेट्रोकेमिकल उद्योग के बहुत-से उपादान, उन विभिन्न मिश्रण के कुप्रभाव छोड़ गये हैं। (*स्रोत : केमिकल हब, आतंक की पृष्ठभूमि! दैनिक स्टेट्समैन, 29 जून, 2007*) बिल्कुल यही हाल हमारे उन्नयन के रोल मॉडल चीन का भी है। चीन के झिलिन अंचल में पहला केमिकल हब बनाया गया था। झिलिन जिस नदी-तट पर स्थित है, उस डाउलिन नदी का पानी, केमिकल हब के वर्ज्य पदार्थ के मिलने से, पीले रंग का हो गया है। यहाँ ईलिश मछली जैसी एक मछली होती है, जो नदी में अंडे देती है। ये मछलियाँ

इस नदी में प्रचुर मात्रा में मौजूद थीं। और उनके अंडे भी प्रचुर मात्रा में मिलते थे। लेकिन अब विषक्रिया से आक्रान्त होने की वजह से, अब सरकारी तौर पर, वहाँ मछलियाँ पकड़ने पर पाबन्दी लगा दी गयी है।(*स्रोत : Pesticide Action Network, North America*)

विश्व स्वास्थ्य संस्था की सन् 1998 की रिपोर्ट में कहा गया है कि चीन के 272 शहरों में से चीन के दस शहरों की हवा में सर्वाधिक प्रदूषण मौजूद है। देश के 5% अंचलों में एसिड की बारिश होती है। चीनी लोग ज यादातर दिल या फुसफुस के रोग से दम तोड़ देते हैं। (*आभार : मंथन सामयिकी, जनवरी, 2007*)

हमें याद रखना चाहिए कि उन्नत देशों में परिवेश-दूषण सम्बन्धी कानून अत्यन्त सख़्त हैं। इसलिए परिवेश क ानून का अनुपालन करते हुए परिवेश में दूषण फैलानेवाले उद्योग-निर्माण करना, बेहद ख़र्चीला और महँगा होता है। इसीलिए ये तमाम अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियाँ उन्नयनशील देश चुन लेती हैं, जिसकी हवा, माटी जल, अनायास ही दूषित करते हुए, वे लोग अपने मुनाफे-निर्माण के कारखाने, काफी कम ख़र्च पर चला सकते हैं। ब्राज ील देश ऐसी ही मिसाल है। ऐसे-ऐसे भयंकर दृष्टांत सामने हैं, फिर भी हमारे वामपंथी नेतागण, इन क्षतिग्रस्त देशों के चरण चिह्नों पर चलने को आमादा हैं।

6. सामाजिक-दूषण

'सेज ' के आस-पास के अंचलों में सामाजिक-दूषण और अपराध-प्रवणता पर भी सवाल उठे हैं। सेज के भीतर-बाहर धन की विषमता क्रमशः बढ़ती ही जाएगी। इस वैषम्य के साथ-साथ, आस-पास के अंचलों के लोगों के साथ, सेज के अन्तर्गत रहने वाले लोगों के बीच सामाजिक और मानसिक अलगाव, विभिन्न कि स्म के अपराधों को जन्म देगा। इसके अलावा, सेज के सर्वमय कर्ता-धर्ता होंगे डेवलपमेंट कमिश्नर! अगर वे चाहें, तो सेज क्षेत्र में नाइट-क्लब, वेश्यालय या जुए का अड्डा खोल सकते हैं। सेज कानून के मुताबिक इस काम में बाधा देने का हक , न तो सरकार को होगा, न पुलिस को।

7. नौकरी-रोज गार झूठा प्रचार

इतने नुकसान, इतनी आफतों के बावजूद सेज की तरफदारी में, सरकार नारे लगा-लगाकर लोगों को गुमराह करना चाहती है। उसका कहना है कि उद्योग लगाने से ही राष्ट्रीय आय बढ़ेगी और राष्ट्रीय आय बढ़ने से ही कामकाज और नौकरी का

ज्वार उमड़ पड़ेगा और देश में कोई एक भी बंदा बेरोज गार नहीं रहेगा। सभी लोगों के लिए काम होगा, नौकरी जुट जाएगी। पढ़े-लिखे, मध्यवित्त श्रेणी के लोग इस चटखदार नारे से सबसे ज यादा मुग्ध हो रहे हैं, लेकिन इससे बड़ा झूठ और कुछ नहीं है, यह समझना बेहद ज रूरी है।

राष्ट्रीय आय बढ़ने से ही समाज के सभी लोगों का उपकार होगा, ऐसा बिल्कुल नहीं है। असमान बंटन व्यवस्था की वजह से राष्ट्रीय आय-वृद्धि का सुफल सिर्फ धनी वर्ग तक ही सीमाबद्ध रहेगा और अमीर-ग रीब का अन्तर क्रमशः बढ़ता जाएगा। राष्ट्रीय आय बढ़ने से ही नौकरी-चाकरी या रोज गार भी बढ़ जाएगा, ऐसा बिल्कुल नहीं है। हमें यह भी याद रखना होगा कि प्रतियोगिता में टिके रहने के लिए, उद्योगपति वर्ग सेज के अंतर्गत जिस कि स्म का उद्योग चालू करेंगे, वे सभी उच्च-तकनीक-सम्पन्न, पूँजी निविड़ यानी बहुत मोटी पूँजी-समृद्ध उद्योग होगा। वहाँ श्रम की भूमिका बेहद कम होगी। मैनुफैक्चरिंग उद्योग में श्रम-संकुचन यन्त्र इस्तेमाल करने का रिवाज क्रमशः बढ़ता जा रहा है। इसके फलस्वरूप रोजगार या नौकरी के जितने मौके तैयार होते हैं, उसके मुकाबले कर्मच्युत, बेरोजगार लोगों की संख्या कहीं ज्यादा होती जा रही है।

सन् 1998 में यू. एन. डी. पी. द्वारा प्रकाशित ह्यूमैन डेवलपमेंट रिपोर्ट में, आय-वृद्धि के इस तरीके को बेहद हृदयहीन, छिन्नमूल, भविष्यहीन, रोजगारहीन वृद्धि यानी बेहद ruthless, rootless, futureless, jobless growth कहा गया है। (*आभार : दैनिक स्टेट्समैन, 3 नवम्बर, 2006*)। अर्थात् इस वृद्धि के फलस्वरूप मुट्ठी-भर हाथों में ढेरों धन जमा होता जाएगा, दूसरी तरफ बेरोजगारी के फलस्वरूप गरीबी और दरिद्रता बढ़ेगी। लोग अपनी जड़ों से उखड़ जाएँगे और स्वदेश जैसा कोई शब्द नहीं होगा। रवीन्द्रनाथ की भाषा में लोग इतिहास के फटे-टूटे पत्तों की तरह उड़ते-बहते फिरेंगे और चूँकि यह उन्नयन नितान्त अस्थायी, सन्तुलनहीन है, इसलिए इसका भविष्य भी नितान्त अनिश्चित है। इस भेद स्फीत उन्नयन की उम्र, अंत में बहुत जल्दी ही अँधेरे में विलुप्त हो जाएगी।

अर्जेण्टिना एक उदाहरण

यह उन्नयन नितान्त अल्पायु है, इसका ज्वलन्त उदाहरण है, हमारे गोलार्ध की उल्टी तरफ बसा हुआ, अर्जेण्टिना नामक देश।

प्रेसिडेंट मोनम और उनके वित्तमंत्री, जिन्होंने अमेरिका की हावार्ड यूनिवर्सिटी से शिक्षा प्राप्त की थी, सन् 1989 में विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ भण्डार के

द्वारा अनुमोदित अर्थनीति लागू की।

विनिवेश के ज रिये सरकारी संस्थानों का गैर-सरकारीकरण, विदेशी निवेश पर से नियन्त्रण हटा लेना, श्रम-कानून बदलकर, श्रमिकों की मनचाही छँटनी कर देना यानी सेज अनुमोदित पूरी अर्थनीति अर्जेण्टिना में लागू कर दी गयी। स्थायी नौकरी की धारणा ही बिल्कुल खारिज कर दी गयी। अब नियुक्ति भी, सेज के मुताबिक की जाने लगी। समझौते के मुताबिक काम भी बढ़ा दिया गया। मजदूरों के पारम्परिक और अर्जित अधिकार ख़त्म कर दिए गए। विदेशी पूँजी की सहायिका के तौर पर देशी पूँजी का कुल एक हिस्सा, पूँजी के तौर पर टिका रहा। इन दोनों पूँजियों का हाथ थामकर सन् 1989 से 1996 तक राष्ट्रीय आय में 7.6 प्रतिशत वृद्धि हुई। लेकिन यह वृद्धि नियुक्तिहीन वृद्धि है। संगठित उद्योग में श्रमिकों की नियुक्ति की तादाद घटने लगी। इस तरह संगठित 90 लाख श्रमिकों में से 40 लाख ही रह गए, बाकी लोगों को बाहर भेज दिया गया। राष्ट्रीय आय के साथ-साथ बेरोज गारी बढ़ने लगी। बेरोज गारी-दर 12 प्रतिशत से कम कभी भी नहीं हुई। एक तरफ बूएनस एयरेस शहर में अमेरिकी स्टाइल के चकाचौंध वाले सैकड़ों शॉपिंग मॉल छा गये, दूसरी तरफ छोटी-छोटी दुकनिया टिमटिमाती रहीं। विदेशी-निवेश की मेहरबानी से मध्यवित्त लोगों का एक वर्ग तैयार हो गया, जिन्होंने अर्थ नैतिक समृद्धि का मुँह देखा, वे लोग प्रेसिडेंट मोनम का समर्थन करते हुए चलते रहे, लेकिन नौकरी-चाकरी कम होती गयी। सन् 2001 में अर्जेण्टिना के रोज गार-सक्षम 20% लोग, बेरोज गार हो गए। सन् 2001 के बड़े दिन के मौके पर एक अजीब दृश्य नज र आया मोनम के सैकड़ों शौकीन शॉपिंग मॉल में सामग्रियों के ढेर लगे थे, जो बिके ही नहीं, क्योंकि इस बीच असंख्य लोग गरीबी की सीमा से नीचे उतर चुके थे। दूरदृष्टिहीन मध्यवित्त वर्ग, जो लोग अब तक प्रेसिडेंट मोनम की तरफदारी करते रहे थे, वे लोग भी इस उन्नयन के खौफनाक स्वरूप को पहचान गए। अन्त में सन् 2001 में लोग सड़कों पर उतर आए और सबने मिलकर प्रेसिडेंट मोनम को गद्दी से उतार दिया और उनके 'उन्नयन' के सपने पर भी मिट्टी डाल दी। (*स्रोत : भूमंडलीकरण और उन्नयन, रतन खासनबीस*)

सिंगुर : एक उदाहरण

हम सबके घरों के बिल्कुल करीब ही, अप-उन्नयन का एक ज्वलन्त उदाहरण है सिंगुर! सिंगुर का प्रस्तावित कारख़ाना, हालाँकि सेज में अन्तर्भुक्त नहीं है, फिर भी उर्वर कृषि-ज मीन ध्वंस करके, औद्योगीकरण की कोशिश, किस हद तक भयानक

विपर्यय और तबाही लाएगी, यह सिंगुर के उदाहरण से ही उजागर हो जाता है। यह दुहाई देते हुए कि औद्योगीकरण के फलस्वरूप रोज गार मिलेगा, इसीलिए वहाँ मोटरगाड़ी कारख़ाना स्थापित करने के लिए, देश की दो-तीन फसली, उर्वरतम कृषि-जमीन को उजाड़ दिया गया। समीक्षा करें, तो पता चलता है कि इस इलाके में कृषि और कृषि से जुड़े विविध जीविका से जुड़े, प्रायः 20,000 लोग नियुक्त थे। हालाँकि टाटा के कथनानुसार वहाँ कुल 800 लोग मोटर कारखाने में नौकरी प्राप्त करेंगे। और उस मोटर कारखाने में उसी किस्म के सहायक उद्योग में रोज गार प्राप्त कर सकते हैं। ऐसे लोगों की संख्या और 2000 है। यानी 20,000 लोगों की जीविका नष्ट करके, वहाँ कुल 3000 लोगों को रोज गार देकर ही, सरकार रोज गार देने का नारा बुलन्द करना चाहती है। (*स्रोत : एकक मिती नाटक का नायक, रतन सेनगुप्ता*) सवाल यह है कि बाकी 17,000 लोग, नौकरी कहाँ पाएँगे? सरकार के पास इसका कोई जवाब नहीं है, हालाँकि ये लोग 'उन्नयन' का नारा रटते जा रहे हैं।

समूचे विश्व में हर जगह ही अब पूँजी-निविड़, उच्च-तकनीक-सम्पन्न, विशाल उद्योगों का यही हाल है। जहाँ 1 करोड़ रुपयों का निवेश है, वहाँ 2 लोगों से अधिक के लिए रोज गार संभव नहीं है। राज्य सरकार की तरफ से, जिस उद्योग की बात, इतने जोर-शोर से घोषित की गयी है, उसी हल्दिया पेट्रोकेमिकल्स में कुल 5,170 करोड़ रुपये निवेश किये गये हैं, लेकिन वहाँ नौकरी मिली है, कुल 600 लोगों को। एक परिगणना की जाए, तो मामला स्पष्ट हो जाएगा। 'एनुअल रिव्यू ऑफ वेस्ट बंगाल इकोनॉमी, सेंटर फॉर मॉनीटरिंग इंडियन' की रिपोर्ट मुताबिक, सन् 1995 में, जहाँ बंद हो गए कारखानों के कर्मचारियों की संख्या थी फी कारखाना, 1825। सन् 2003 में बंद कारखानों के मामले में, वहाँ फी कारखाना, 146 कर्मचारी ही रह गये हैं। सन् 1995 में जो नये कारखाने खुले हैं, वहाँ फी कारखाना कर्मचारियों की तादाद थी कुल 49 और सन् 2003 में जो नये कारखाने खुले वहाँ भी फी कारखाना कर्मचारियों की संख्या घटकर कुल 38 रह गयी है अर्थात् कारखानों में तकनीकी प्रयोग की अग्रगति की वजह से, पूँजी-निवेश बढ़ता जा रहा है और कर्मचारियों की औसत तादाद घटती जा रही है। (*स्रोत : वर्तमान, 5 मई, 2007*)।सभी सेज के मामले में यही तस्वीर है। अगर राष्ट्रीय आय बढ़ाने से ही, उसके नतीजे में रोज गार बढ़ जाता है, तो सन् 2006 में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना चालू करने की ज रूरत नहीं पड़ती, जिस वजह से जी. डी. पी. वृद्धि-दर आजकल, अतीत के किसी भी समय से बहुत अधिक है।

इस तरह नज र यह आ रहा है कि लाखों-लाखों एकड़ कृषि-ज मीन ध्वंस करके,

लाखों-लाखों किसानों की जीवन-जीविका निगलकर, बेहद निर्मम तरीके से परिवेश तबाह करके, देश की खाद्य-निश्चयता में रोड़े डालकर, सामाजिक दूषण की सृष्टि करके देश की सार्वभौमिकता तक में विघ्न डालकर वाम फ्रण्ट सरकार और शासकवर्ग के बुद्धिजीवी लोग जिस रोजगार और नौकरी की बातें बार-बार दोहराते है, वह महज एक फ ानूस है, जिसे फूँक में उड़ाया जा सकता है।

> औद्योगीकरण, निर्यात कारोबार और उन्नयन के नाम पर, शासकवर्ग, बिना किसी सूझ-बूझ के उन तमाम ज मीनों का अधिग्रहण किये जा रहा है, जिस पर निर्भर करते हुए, बहुत-से किसान, सांझा-किसान, खेत-मजूर, मछेरे और अन्यान्य लोग अर्से से जीवन-निर्वाह करते आ रहे हैं। समूचे हिन्दुस्तान में 403 सेज को अनुमोदन दिया गया है, जिसका कुल क्षेत्र है 4,37,245 एकड़। यह बात ध्यान देने योग्य है कि पश्चिम बंगाल तुलना में छोटा राज्य भले हो, यहाँ अनुमोदित सेज इलाके का कुल क्षेत्रफल, हरियाणा और राजस्थान को छोड़कर, भारत के अन्य सभी राज्यों से बहुत ज यादा है। (स्रोत : अपडेट, अंक 13)

विभिन्न देशों में सेज : एक नज र में

दुनिया के विभिन्न देशों में मुक्तद्वार निर्यात-निर्भर 'सेज ' नामक औद्योगीकरण की परिणति क्या होगी, उस पर एक नज र डाल लें

(1) अर्जेण्टिना में दस वर्षों में बेरोजगारों की संख्या बढ़कर 20% हो चुकी है। असंख्य लोग गरीबी सीमा रेखा के नीचे रह रहे हैं।

(2) फिलिपाइन्स, कभी खाद्य उत्पादन में सिर्फ स्वयंसम्पूर्ण ही नहीं था, बल्कि वह देश कृषि सामग्रियाँ निर्यात भी करता था। मुक्तद्वार वाणिज्य के फलस्वरूप उस देश में खाद्य-सुनिश्चितता जैसी कोई बात नहीं रही। अब, उस देश को मांस-मछली, चावल-चीनी, फल वगैरह सारा कुछ आयात करना पड़ता है। (*Feeding the world : 'Agriculture, Development and Ecology', Scientis Register, 2007*)

(3) चीन की स्थिति कम भयावह नहीं है। राष्ट्रीय आयवृद्धि के फलस्वरूप चीन के कृषि-परिवार दाने-दाने को मोहताज हैं। वहाँ के गाँव-गाँव की महिलाएँ, उपकूलवर्ती शहरों के समृद्ध इलाकों में, देह-व्यापार में संलग्न हैं। खाद्य-उत्पादन में काफी ह्रास हुआ है। चीन का आकाश-वाताश-जल भयंकर रूप से दूषित है। जनस्वास्थ्य-संकट नियन्त्रण से बाहर जा चुका है। (*आभार : संग्रामी दिशा, मार्च-अप्रैल, 2007*)

(4) लगभग इसी किस्म का दृष्टान्त हमने अपने पड़ोसी प्रान्त, आन्ध्र में भी चन्द्र

बाबू के ज   माने में देखा। एक तरफ तमाम-शहर औद्योगीकरण के फलस्वरूप चकाचौंध पूर्ण हो उठे। दूसरी तरफ गाँवों के गरीब किसान आहार के अभाव में आत्महत्या कर रहे हैं। चुनाव में लोगों से वोट न पाकर, उन्हें पदच्युत होना पड़ा।

(5) ब्राज   ील में रासायनिक राजधानी क्यूबाटाओ, भयंकर परिवेश-दूषण के फलस्वरूप अन्त में मौत की वादी में परिणत हो गया।

(6) इण्डोनेशिया में भी आगा-पीछा सोचे बिना, कृषि-ज   मीन ध्वंस की गयी और वहाँ 'सेज   ' निर्माण किया गया। सन् 1998 के जुलाई महीने में राष्ट्रपति, बी. जे. हबीबी ने इण्डोनेशिया के 20 करोड़ निवासियों से अपील की   राष्ट्रीय खाद्य भंडार तेज   ी से ख़त्म हो रहा है। इस भयंकर संकट की घड़ी में सन्तुलन बनाये रखने के लिए, प्रति सप्ताह, आप लोग कम-से-कम दो दिन भात न खायें। इन उपवासों से समूचे देश में, हफ्ते में कम-से-कम दो दिन, चावल की बचत होगी। (*स्रोत : दैनिक स्टेट्समैन, 2 फरवरी, 2007)* ऐसे बहुत-से दृष्टान्त हैं, जो पेश किये जा सकते हैं।

विकल्प उन्नयन

इतनी सारी चर्चाओं के बाद, अगर कोई यह सवाल कर बैठे   'तो क्या उन्नयन नहीं होगा?' इसके जवाब में हिम्मत बटोरकर, अब यह कहने का समय आ गया है   'उन्नयन कोई अलौकिक, अतिमानव देवमूर्ति नहीं है। इन्सान के लिए ही उन्नयन है, किसी अमूर्त उन्नयन के लिए इन्सान नहीं है। अगर सर्वाधिक इन्सानों का मंगल न हो तो उस उन्नयन की ज   रूरत क्या है?'

हमारे देश में पहले काफी सारे उद्योग हुए हैं और उन उद्योगों ने अपेक्षाकृत काफी कम जगह ली है। टाटा की उद्योग नगरी के लिए कुल 64 वर्ग किलोमीटर जगह की ज   रूरत पड़ी थी; इस क्षेत्र में रिलायन्स इंडस्ट्रीज, मुम्बई ने 200 वर्ग किलोमीटर जगह दखल की; चंडीगढ़ का रीयल इस्टेट, चारों तरफ के गाँवों को मिलाकर, 112 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। यही प्रक्रिया अगर जारी रही और सेज   चलता रहा तो एक दिन समूचा देश ही विदेश बन जाएगा। *(स्रोत : The Gazette of India, 31, 23 June, 2005; Business World, 13 Nov, 2006)*

इसके बावजूद पूँजी बहुल सेज   और बृहद् उद्योग के बजाय श्रम बहुल लघु उद्योग, कृषि सहयोगी उद्योग या कुटीर-शिल्प को प्रोत्साहन देना ज्यादा ज   रूरी था, क्योंकि इसके ज   रिये प्रचुर लोगों को रोज   गार मिलेगा। अर्से से रची गढ़ी गयी समूची

बुनियाद और सामाजिक-प्राकृतिक परिवेश भी इतने खौफनाक ढंग से दूषित नहीं होगा। समवाय के आधार पर कृषि उत्पादन और बंटन-व्यवस्था चालू करके, कृषि उत्पादन और विपणन को और अधिक लाभकारी बनाना संभव होगा।

वाम फ्रण्ट सरकार के मंत्री एक हास्यास्पद धारणा प्रचारित करने की कोशिश कर रहे हैं कि कृषि नितान्त ही असभ्य, आदिम वृत्ति है। मानो किसान से श्रमिक में रूपान्तरित होना बेहद गर्व की बात है, क्योंकि इतिहास की गति उसी तरफ है। अर्थात् मनुष्य की जैविक रक्षा के लिए खाद्य-फसल जैसे उपादान, जो अत्यन्त ज रूरी हैं, उनकी पैदावार की कोई ज रूरत नहीं है। 'सभ्य', 'शिल्पोन्नत' इन्सान मानो बिना खाये-पीये ही, जि न्दा रह सकेगा। ये सब नितान्त बचपने भरी उक्तियाँ दिखाकर, इन्सान को गुमराह करने के बावजूद, वे लोग यह हक ीकत भी बखूबी जानते थे या फिर अनजाने में ही इस सच को दबाने की कोशिश कर रहे हैं कि कृषि भी एक किस्म का उद्योग है। आजकल हम जो अपने आस-पास सैकड़ों तरह के धान, सैकड़ों तरह के आम, सैकड़ों तरह की फसलें देख रहे हैं, वह सारा कुछ प्रकृति में पहले से ही मौजूद था, ऐसा नहीं है। इन्सान अपनी बुद्धि और तजुर्बे के दम पर इन सबका परम्परा सृजन करता आ रहा है। कृषि-कार्यों के लिए इन्सान की बुद्धि और तजुर्बे की अगर कोई ज रूरत ही नहीं है तो कृषि-सम्बन्धी तमाम सेंटर, संस्थाएँ बंद कर देना ही बेहतर था।

विदेशी मुद्रा अर्जन के लिए हम लोग निर्यात-निर्भर उद्योगों का आश्रय ले रहे हैं, जबकि प्रचुर मुद्रा लाने में जो उद्योग सक्षम है, उस चाय उद्योग के प्रति हमारी राज्य सरकार उदासीन है और चाय उद्योग ध्वंस के कगार पर खड़ा है। इस तरफ सरकार की नज र नहीं है। प्रकृति की विशेष मेहरबानी के कारण हमारे राज्य की आबोहवा, जल, माटी, चाय की खेती के लिए ख़ासतौर पर उपयोगी है। हज ार कोशिशों के बावजूद पहली दुनिया के तमाम देशों में लाभकारी तरीके से चाय की पैदावार संभव नहीं है, फिर भी इस मौके की उपेक्षा करते हुए, चाय बागान ध्वंस करके, वहाँ उद्योग नगरी के निर्माण की कोशिशें चल रही हैं।

पाट-उद्योग के बारे में भी यही बात लागू होती है। हमारे राज्य में पाट की जैसी पैदावार होती है, वैसी और कहीं नहीं होती। इसीलिए, किसी ज माने में यहाँ गंगा नदी के दोनों किनारों पर पाट-उद्योग बस गया। यह उद्योग भी विदेशी मुद्रा अर्जित करने में सहायक हो सकता है। लेकिन प्रचुर संख्या में जूट-मिल बंद हो गये, फलस्वरूप विदेशी मुद्रा उपार्जन करने वाले, कृषि-आधारित यह उद्योग पूरी तरह ध्वंस के कगार पर हैं। इस उद्योग को पुनर्जीवित करने के बजाय, 'सेज ' को लेकर

उत्साहित होने की मूढ़ता, हम क्यों करें? कृषि या कृषि-आधारित उद्योग का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि उद्योग से दूषित वर्ज्य, जल्दी ही उत्पन्न होता है, जो परिवेश को ज हरीला बना देता है। रोजग ार के मौके अपेक्षाकृत ज्यादा हैं और इसके द्वारा अमूल्य प्राकृतिक सम्पदाओं की भी मनमानी लूट नहीं होती। ऐसे में कृषि और कृषि-उद्योग के सम्बन्ध में हम लोग क्यों ऐसे अवज्ञासूचक मनोभाव ग्रहण करें? हमें यह याद रखना चाहिए कि सन् 1981 में पश्चिम बंगाल में गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों की संख्या 51 प्रतिशत थी, सन् 2001 में वह घटते-घटते 31 प्रतिशत प्रति गयी। यह जो 20 प्रतिशत ह्रास होने की वजह यह नहीं थी कि यहाँ कोई भारी उद्योग की स्थापना हुई। वजह यह थी कि इन दो दशकों में इस राज्य में कोई भारी उद्योग या मोटर कारखाना शरू किया गया । इसका श्रेय एकमात्र प्राप्य सीमित भूमि-संस्कार और कृषि कार्य की उन्नत सेवा। *(आभार स्वीकार : दैनिक स्टेट्समैन, 24 दिसम्बर, 2006)*। सन् 1983-84 से 1993-94 तक कृषि की सालाना वृद्धि-दर 4.45 प्रतिशत थी। अर्थात् प्रायः पंजाब के दर के बराबर। इसके फलस्वरूप इन दस वर्षों में ग्रामीण गरीबी की दर 61.56 प्रतिशत से कम होकर 37.34 प्रतिशत पर आ ठहरी। यह उल्लेखनीय है, इसमें कोई शक नहीं है। इससे यह बात साबित हो जाती है कि कृषि की अग्रगति होती रहे, तो दरिद्रता बहुत जल्द मिटायी जा सकती है। *(स्रोत : दैनिक स्टेट्समैन, 30 जुलाई)*

कृषि कार्य में हमारी तरक्की की संभावना अभी भी ख़त्म तो नहीं हुई। सिंचाई के अभाव में अभी भी काफी सारी एक-फसली ज मीन यूँ ही पड़ी रहती है। हर कहीं आधुनिक कृषि-तकनीक का इस्तेमाल नहीं किया जा रहा है, कृषि-सामग्रियों के संरक्षण की व्यवस्था की भी कमी है, मार्केटिंग व्यवस्था भी किसानों के हित के अनुकूल नहीं है। सरकार इन सब मामलों को अहमियत देने की कोई कोशिश नहीं कर रही है। दूसरी तरफ कृषि सम्बन्धी उद्योग के प्रति भी सरकार की उदासीनता गौरतलब है। अधिक उपादान के फलस्वरूप या माँग घट जाने की वजह से, कई-कई फसलों का सही मूल्य नहीं मिलता। हालाँकि इन सब फसलों के संरक्षण और अन्यान्य प्रक्रियाकरण के ज रिये, राज करने के प्रयास के प्रति अगर सचमुच ज ोर दिया जाता, तो किसानों की मेहनत व्यर्थ नहीं जाती। उन लोगों को फसल का समुचित मूल्य मिल जाता और वे लोग खेती-बारी में और ज यादा सजीव प्रयास कर पाते तथा श्रम बहुल इस कि स्म के लघु उद्योग में असंख्य लोगों को रोजग़ार का मौका मिल पाता। इन सब उन्नयन की तरफ किसी कि स्म की दृष्टि न डालकर, खेती नष्ट

करके, एक मात्र सेज निर्माण करने को ही उन्नयन की राह आखिर कैसे कहा जाए?

उपसंहार

कौन-कौन से उद्योग गढ़ना, जनहित में होगा, यह बाद में सोचने का विषय हो सकता है। लेकिन 'सेज ' जो हर तरह से हमारे जीवन, हमारी संस्कृति, हमारे परिवेश के पक्ष में भयंकर नुकसानदेह होगा, हम दुनिया के सभी क्षतिग्रस्त उन्नयनशील देशों के इतिहास का गहराई से अध्ययन करके, सोचें-समझें, इसके लिए क्या अभी भी वक्त नहीं आया? 'सेज ' सचमुच ही ड्रग की तरह, हमारे राजनैतिक नेताओं के खून में घुलमिल गया है, इसका ज्वलन्त उदाहरण है। हाल ही में 'सेज ' के बारे में सी. पी. एम. नेताओं की उक्ति। सी. पी. एम. पार्टी की तरफ से कहा गया है कि केन्द्रीय सेज नीति क्षतिकारक है, इस बारे में वे लोग काफी सजग हैं और इस बारे में वे लोग केन्द्रीय सरकार को समझाने की भी कोशिश कर रहे हैं। लेकिन केन्द्रीय सरकार उन लोगों की बातों पर कान न दे और अन्यान्य राज्य अगर 'सेज ' निर्माण में जुटे रहें, तो वे लोग भी 'सेज ' निर्माण से पीछे नहीं हटेंगे। यानी और-और लोग ज हर खायेंगे, तो वे लोग भी ज हर खाने का मौका नहीं छोड़ेंगे। इस तर्क पर कोई मंतव्य करना फिजूल है। सिर्फ इतना ही कहा जा सकता है कि सेज का सोने का सर्वनाशी हिरण का आकर्षण, हमारी बोध-बुद्धि किस कदर लुप्त करने को आमादा है, यह उक्ति उसी का प्रमाण है। बुद्धि-विलुप्त करने वाले, इन सर्वनाशी के हाथों से अपने को मुक्त करने का वक्त क्या अभी भी नहीं आया?

> हाल ही में सिंगुर में उद्योग के नाम पर ज ोर-ज बर्दस्ती कृषि-ज मीन अधिग्रहण और बेक सूर किसानों पर पुलिसिया ज ोर-जुल्म और निर्यातन के खिलाफ प्रतिवाद के उद्देश्य से ही, बारासात के बहुविशिष्ट नागरिकों के सहयोग से और पैट्रोनेज में बारासात संहति परिषद गठन का प्रस्ताव किया गया। यह संस्था किसी राजनैतिक पार्टी से जुड़ी हुई नहीं है। तमाम क्षुद्र और संकीर्ण दलतन्त्र से ऊपर उठकर, इस संस्था का मूल उद्देश्य है तमाम बीभत्सता, अन्याय, तानाशाही के खिलाफ, इन्सान की स्वस्थ सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक चेतना को जाग्रत करना। (बारासात संहति परिषद के लिए मीना घोष और तापस कर द्वारा प्रकाशित और श्रीपर्णा प्रिण्टर्स, 40, चूनापुकुर लेन, कोलकाता-700009 द्वारा मुद्रित।)

कलकत्ता से 50-100 मील के दायरे में प्रस्तावित उद्योग-ताल्लुके की तालिका

स्थान	उद्योग	उद्योगपति	जमीन का क्षेत्रफल (एकड़)
डानकुनी	उपनगरी और उद्योग ताल्लुका	डी एल एफ (दिल्ली)	6000
खड़गपुर	हेवी अर्थ मूविंग वेहिकल्स	टाटा टेलकम	1600
पूर्व मेदिनीपुर	केमिकल हब	सालिम समूह	25000
संकरैल	उद्योग पार्क		12000
खड़गपुर	इस्पात	भूषण स्टील	3000
शालबनी	इस्पात	जिन्दल	4000
पश्चिम मेदिनीपुर	वैद्युतिक यंत्र	वीडिओकॉन	25000
उ. 24 परगना	राजारहाट नानकिंग हाइटकेज ेम	चीन और पियरलेस	12000

(स्रोत : दैनिक स्टेट्समैन, 12 अगस्त, 2007)

सेज : किसलिए, किसके लिए

इसका प्रकाशन क्यों?

आपदाओं का समय है यह। दुनिया भर को थर्रा देने वाले व्यापारी समस्त इन्सानी बिरादरी की आशा-आकांक्षाओं को निगलते हुए, समूचे देश-समाज-परिवेश सब कुछ निगल जाने को आतुर हो उठे हैं। उन लोगों के ताल से ताल मिलाकर साथ चल रहे हैं, इस देश में सत्ता के गलियारे में घूमते-फिरते हुए विभिन्न राजनैतिक दल, जो अपने-अपने झण्डों और मतादर्शों के तात्विक नारों के तथाकथित विभेदों के बावजूद 'महान' रिंग-मास्टर, जॉर्ज बुश की उँगली के इशारे पर बेहिचक देश को बेच देने के गिरोह में शामिल हो गए हैं।

मुसीबत के अँधेरे में ही नया सूर्योदय होता है यही इतिहास का नियम है। इसलिए एक तरफ जैसे देश को नीलाम कर देने की उन्मत्त व्यापारिकता और बनिया मनःस्थिति का दौर चल रहा है, दूसरी तरफ, उसी तरह स्वदेश की रक्षा के लिए लगातार जंग यह तैयारी, देश के चप्पे-चप्पे, तमाम खेत-मैदानों में जारी है। उड़ीसा के कलिंग नगर से लेकर पश्चिम बंगाल के नन्दीग्राम तक राष्ट्रीय और राजनैतिक संत्रास के विरोध में एक महा-इतिहास रचा जा रहा है। उसी की रोशनी में इस देश के कोने-कोने में प्रतिवाद का जबर्दस्त स्वर मुखर हो उठा है और यह जंग अब फैलती जा रही है। इसे कृषि-ज मीनों की रक्षा या उच्छेद का विरोध चाहे जिस भी नाम से पुकारा जाए, यह जंग दरअसल साम्राज्यवाद-विरोधी जन-संग्राम है, जिसकी सार्थकता में ही भारतवर्ष की मुक्ति और आत्मनिर्भर-विकास में ही निहित है।

गण-सांस्कृतिक उद्योग विश्व भर में जारी इस साम्राज्यवाद-विरोधी जन-संग्राम में बराबर के शरीक हैं। गण-सांस्कृतिक उद्योग सिर्फ सांस्कृतिक कार्यक्रमों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि समस्त भारत और पश्चिम बंगाल की विभिन्न जगहों में कृषक जागरण के समर्थन में, यथासम्भव खड़े रहने का पक्षधर है। यह संस्था सुरक्षित दूरी

रखकर, सिर्फ समर्थन ही नहीं करती, बल्कि घटना की केन्द्रभूमि में भी कंधे से कंधा मिलाकर खड़ी है। गण-सांस्कृतिक उद्योग का ख़याल है कि एकमात्र इसी ढंग से असली गण-सांस्कृतिक उत्थान संभव है।

आजकल, साम्राज्यवादी लोग जिस ढंग से भारत की तरफ उमड़ पड़े हैं, सेज (SEZ) के बारे में आम लोगों के मन में सैकड़ों सवाल उठने लगे हैं। यहाँ तक कि जो लोग सेज का विरोध कर रहे हैं, उन लोगों के मन में भी किन्हीं-किन्हीं मामलों में अस्पष्ट धारणा काम कर रही है, इसी पृष्ठभूमि में गण-सांस्कृतिक उद्योग ने इस पुस्तिका का प्रकाशन किया है। इस पुस्तिका के ज रिये अगर उन सभी सवालों का जवाब मिल सके और आजकल जारी सेज विरोधी आन्दोलन के प्रचार-प्रसार में हमारा यह प्रयास अगर कोई मामूली-सी भूमिका भी निभा सके, तो हम मानेंगे कि यह पुस्तिका सार्थक और सफल हुई।

SEZ (Special Economic Zone) या विशेष अर्थनैतिक अंचल के बारे में भारत में लगभग हर कहीं चर्चा-परिचर्चा जारी है। अख़बारों और टेलीविज न के पर्दे पर नजर पड़ते ही, इस बारे में सैकड़ों खबरें मिलती रहती हैं। किसी का कहना है कि देश की तरक्की के लिए सेज शुरू करना ही होगा। किसी की राय में सेज चाहिए ही चाहिए लेकिन इस बारे में थोड़ा-बहुत निधि-निषेध भी लागू करना चाहिए। किसी का मंतव्य है, सेज बनाना नहीं चलेगा। कभी केन्द्रीय मंत्रिमंडल की विशेष दायित्व प्राप्त कमिटीजो के बारे में कुछेक संशोधनों की सिफारिश करती है। कभी सी. पी. एम. के जेनरल सेक्रेटरी, प्रकाश करात, प्रधानमंत्री से सेज के बारे में माँग-सनद पेश करते हैं और कभी इसी देश के विभिन्न प्रांतों में सेज स्थापना के प्रयासों के खिलाफ, बड़ी-बड़ी सभाएँ आयोजित की जा रही हैं तथा अगले ही पल सारा कुछ अख़बारों की सुर्खियों के रूप में चमक उठता है।

लेकिन इन विभिन्न बहस-मुबाहसों के बावजूद आम लोग, जो अर्थनीति या समाजनीति के बारे में ज यादा कुछ सोच-विचार नहीं करते या जो लोग चर्चा-परिचर्चा नहीं करते, उन लोगों की नजर में सेज की धारणा स्पष्ट नहीं है। सेज का क्या मतलब है, यह उन लोगों के ध्यान-धारणा में नहीं है। अब, जब धारणा ही स्पष्ट न हो, तो जो भला है या बुरा, यह समीक्षा भी खास सार्थक नहीं हो पाती। इसलिए यह बेहद जरूरी है कि सबसे पहले यह स्पष्ट कर दिया जाए कि सेज आखिर है क्या? इसके पीछे कौन-सी धारणा काम कर रही है। इससे भी पहले, यह भी जरूरी है कि जो लोगजो के पक्षधर प्रवक्ता हैं, उनकी दलीलों को समझ लिया जाए। उन लोगों ने आखिर किस पृष्ठभूमि मेंजो की अनिवार्यता उपलब्ध की है, हम यह समझें। यानी

केंद्रीय और विभिन्न राज्य सरकारें तथा उन लोगों के संचालक क्षमतासीन विभिन्न राजनैतिक दल, सेज को किस नज रिए से देखते हैं, हमारे लिए यह समझना बेहद जरूरी है।

तर्क : विकास और सेज

राजनैतिक मुद्दों या पताकाओं के रंग भले अलग-अलग हों, लेकिन एक विषय में तमाम राजनैतिक दल एकमत हैं कि दुनिया के नक्शे में भारत को उन्नत देशों में शामिल नहीं किया जा सकता। फ ी व्यक्ति औसत आय, विदेशी लेनदेन का संतुलन, मानव संपदा विकास सूचकांक वगैरह विविध राष्ट्रीय मापकाठी पर भारत देश, काफी पिछड़ा हुआ ही है। अर्थनीतिज्ञों के अनुसार सन् 1947 में क्षमता हस्तांतरण के बाद, हर वर्ष ही आर्थिक विकास-दर यानी कुल राष्ट्रीय उत्पादन वृद्धि-दर कमोबेश 8 प्रतिशत के आसपास ही ठहर जाती है, जो बेहद धीमी रफ्तार है। इसी कारण उन्नत देशों के अर्थनीतिज्ञ वर्ग, इसे कभी 'Hindu rate of growth' कहकर मजाक उड़ाया करते थे।

केंद्र और विभिन्न राज्य सरकारों की रिपोर्ट यानी सत्ताधारी विभिन्न मत के वक्तव्यों में यही स्वर अकसर मुखर होता रहा है कि देश में विकास नहीं हो रहा है, यह तो नहीं कहा जा सकता, लेकिन विकास की गति को और अधिक तेज करना होगा। विकास की गति तेज करने के मामले में, ये सभी मूलतः दो बातों पर जोर देते रहे। पहली बात तो यह कि भारत के कुल राष्ट्रीय उत्पादन में कृषि का योगदान, कल-कारखानों के मुकाबले बहुत ज यादा है और इन लोगों की राय में, यह कभी भी विकास का सबूत नहीं है। इन लोगों के मुताबिक विकास का अर्थ है कुल राष्ट्रीय उत्पादन में शिल्प उद्योग को कृषि से कहीं अधिक ऊँचाई पर स्थापित करना। दूसरी बात यह कि विदेशी मुद्रा-भण्डार को सुस्थिर करने के लिए निर्यात में वृद्धि करना। केंद्र या विभिन्न राज्य सरकारों का मूल वक्तव्य है कि बेहद तेज रफ्तार में औद्योगीकरण और उसकी उँगली थामकर निर्यात बढ़ाना इसी युगल प्रक्रिया के जरिये ही भारत का आर्थिक विकास संभव है।

लेकिन सिर्फ चाह भर से ही औद्योगीकरण संभव नहीं है। इसके लिए पूँजी निवेश की ज रूरत होती है। वह पूँजी जिसकी ज रूरत का परिमाण पहाड़ जितना है, वह कौन तीसमारखाँ जुटाएगा? एक ज माना था, जब बुनियादी-शिल्प यथा, लौह-इस्पात, बन्दरगाह, विद्युत, खनिज, रेल वगैरह क्षेत्रों में भारत राष्ट्र ने ही निवेश का दायित्व निभाया था। लेकिन आज इस बारे में, सत्ताधारी विभिन्न राजनैतिक दल ही

कमोबेश एकमत हैं कि इस बदली हुई परिस्थिति में (यानी भूमंडलीकरण के ज माने में) राष्ट्रीय निवेश कोई राह नहीं बन सकती, बल्कि ये सभी लोग ही राष्ट्रीय संस्थाओं पर से सरकारी हाथ हटा लेने की हिमायत करने लगे हैं। हाँ, कोई इसे जल्द-से-जल्द कार्यान्वित करना चाहता है, कोई धीरे-धीरे कदम बढ़ाने की बात करते हैं।

ऐसी स्थिति में निवेश आएगा कहाँ से? इसका एकमात्र जवाब है, बड़े-बड़े लोगों की पूँजी यानी टाटा-बिड़ला-गोयन्का वगैरह। सन् 1990 के दशक से यह देखा गया कि यूरोप-अमेरिका की मल्टी-नेशनल संस्थाएँ भी तीसरी दुनिया के देशों में निवेश के बारे में सोचने लगी हैं और ख़ासी बड़ी-बड़ी राशि निवेश करने लगी हैं। यानी ये लोग भी भावी निवेशकर्ता हो सकते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि भारत में औद्योगीकरण और निर्यात-वृद्धि के संभावित हथियार हैं देशीय बृहद् पूँजी और विदेशी मल्टी-नेशनल संस्थाएँ! इन्हीं माध्यमों से भारत में नये सिरे से निवेश की लहर उमड़ सकती है, विकास दर बढ़ सकती है ऐसा ही एक सपना, सत्ताधारी दलों ने देखना और दिखाना शुरू कर दिया।

लेकिन, अब अहम सवाल यह उठता है कि ये सब भावी निवेशक, इतने-इतने देशों के रहते, भारत में ही निवेश करने क्यों आएँगे। ये लोग अपने कारोबार के लिए अपनी पूँजी लगाते हैं। जहाँ कारोबार करना सबसे ज यादा लाभदायी लगेगा, ये लोग वहीं निवेश करेंगे। अस्तु, सिर्फ यह नारा लगाने से ही काम नहीं चलेगा कि निवेश चाहिए, बल्कि निवेश खींचकर लाना होगा और ऐसा अन्यान्य ढेरों प्रतिद्वंद्वियों से टक्कर लेकर करना होगा। इसलिए जरूरी है कि निवेशकों को लुभाने के लिए, उन लोगों को तरह-तरह की सुयोग-सुविधा और टैक्स-छूट का आकर्षक पैकेज देना होगा। एकमात्र इसी किस्म के पैकेजों के आकर्षण में ही देशी-विदेशी पूँजी को इस देश में निवेश करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। यह अनुमान लगाया जा रहा है कि सेज ऐसा ही एक निवेश आकर्षित करने वाला पैकेज है, जो पूरी क्षमता के साथ विदेशी और देशी पूँजी-निवेश को प्रोत्साहित कर सकता है।

> सन् 2005 में सेज कानून पास होने के बाद से ही, समूचे देश में सेज गठन के प्रस्ताव की मानो बाढ़ उमड़ आयी है। समूची दुनिया में जहाँ प्रायः चार सौ और चीन में कुल छह सेज का अस्तित्व मौजूद है, वहीं भारत में कुल एक साल में ही 200 से भी अधिक सेज गठन का प्रस्ताव आया है। ऑल्टरनेटिव इकोनॉमिक सर्वे, 2005-06, पृ.12

इसी पृष्ठभूमि में, सन् 2000 में, वाजपेयी मंत्रिमंडल के वाणिज्य मंत्री, मुरासोली मारान ने पहली बार सेज परियोजना की घोषणा की। उसके बाद अब तक महाराष्ट्र के सान्ताक्रुज में, केरल के कोचीन में, गुजरात के कांदला और सूरत में,

तमिलनाडु के चेन्नई में, आंध्र के विशाखापत्तनम में, उत्तर प्रदेश के नोएडा में, मध्यप्रदेश के इंदौर में, पश्चिम बंगाल के फॉल्ता में सेज गठित किए गए। इसी बीच केंद्रीय सरकार की तरफ से, पश्चिम बंगाल के कुलपी और सॉल्टलेक समेत समूचे देश में और भी 35 सेज गठन के प्रस्ताव को अनुमोदित किया है। आमतौर पर सेज के बारे में सरकारी नज रिया, वाणिज्य मंत्रालय की विदेशी वाणिज्य नीति द्वारा ही संचालित होता रहा था। दूसरी तरफ आर्थिक छूट का मुद्दा विभिन्न सरकारी दफ्तरों के सर्कुलर या नोटीफिकेशन द्वारा नियंत्रित होता था। चूँकि इससे विभिन्न विभाग और मंत्रालय जुड़े हुए थे। इसलिए सामग्रिक तौर पर एक स्थिर पद्धति ग्रहण करना भी जटिल और समय-सापेक्ष हो उठा। फलस्वरूप सरकारी महल में यह धारणा घर कर गई कि निवेशकों की आस्था, और अच्छी तरह अर्जित करने के लिए एक सुसंबद्ध कानून बनाने और इस कानून को कार्यान्वित करना बेहद जरूरी है। सन् 2005 की 9 मई को लोकसभा में और सन् 2005 में ही 11 मई को राज्यसभा में यह बिल पास हुआ और सन् 2005 की 23 जून को इस बिल को स्वीकृति मिल गई। प्रसंगवश याद रखना जरूरी है कि लोकसभा और राज्यसभा में यह बिल सर्वसम्मति से पास हुआ था यानी कांग्रेस-बीजेपी-समाजवादी-वामपंथी समेत विभिन्न पार्टियों ने सेज बिल का समर्थन किया।

आइए, अब देखें कि इस बार सेज कानून की विभिन्न महत्त्वपूर्ण धाराओं में क्या-क्या कहा गया है।

सेज कानून : चुम्बक

सेज कानून में कुल मिलाकर 58 धाराएँ शामिल हैं। यहाँ केवल उन्हीं धाराओं का उल्लेख किया जा रहा है, जो बेहद महत्त्वपूर्ण हैं*(तारांकित) निशानवाली धाराएँ खासतौर पर ध्यान देने योग्य हैं।

धारा विवरण

3(1) केंद्रीय सरकार या राज्य सरकार या कोई व्यक्ति एक-दूसरे के सहयोग में या व्यक्तिगत रूप से सेज का गठन कर सकते हैं।

*5 केंद्रीय सरकार किसी भी अंचल में सेज स्थापना के लिए या किसी सेज में अतिरिक्त इलाके जोड़ेगी, इसका नोटीफिकेशन जारी करने के मामले में निम्नलिखित विषयों पर विचार करेगी।

1. अतिरिक्त अर्थनैतिक कार्यों का सृजन।

2. सामग्री और सेवा का निर्यात ।
3. आभ्यन्तरीन और विदेशी स्रोतों से निवेश में विकास।
4. रोज गार में विकास।
5. संरचनागत विकास।

*7 जो में शामिल कोई भी संस्था या सेज के निर्माता द्वारा किसी भी सामग्री या सेवा के आयात और निर्यात और यहाँ तक कि सेज से बाहर भारत के किसी भी स्थान से सेज में कोई सामग्री या सेवा खरीदी जाए, तो उस लेन-देन पर पहली अनुसूची में उल्लिखित विभिन्न कानून लागू होंगे, शुल्क या सेस (Cess) नहीं लगाए जाएँगे।

10 अनुमोदन बोर्ड अगर ज रूरी समझे, तो निर्धारित पद्धति का पालन करते हुए सेज -निर्माता को दिया गया अनुमोदन स्थगित कर सकता है या किसी अन्य उत्साही निर्माता को हस्तातंरित कर सकता है।

11 केंद्रीय सरकार सेज में एक डेवलपमेंट कमिश्नर नियुक्त करेगी।

*12(3) डेवलपमेंट कमिश्नर ही सेज के सामग्रिक निदेशक होंगे और विभिन्न प्रशासनिक अधिकारों का निर्वहन करेंगे।

13(1) केंद्रीय सरकार हर सेज के लिए एक अनुमोदन-कमिटी गठित करेगी।

15(2) कोई भी इच्छुक व्यक्ति सेज अंचल में संस्था स्थापित करने के लिए डवेलपमेंट कमिश्नर को आवेदन कर सकता है।

15(3) डेवलपमेंट कमिश्नर आवेदन ग्रहण, वर्जन या संशोधन समेत, अनुमोदन प्रदान कर सकते हैं।

*17(1) जो अंचल में ऑफ शोर (अपतट) बैंकिंग शाखा स्थापना के लिए रिज र्व बैंक को आवेदन किया जा सकता है।

*18(1) केंद्रीय सरकार सेज अंचल में अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक सेवा केंद्र स्थापना के प्रस्ताव का अनुमोदन कर सकती है।

*20 अन्यान्य विविध कानूनों में चाहे जो भी निर्देश दिया गया हो, केंद्रीय सरकार जो अंचल में घोषित कोई अपराध होता है या नहीं, इसके परिदर्शन के लिए किसी भी अधिकारी या एजेंसी को अधि सूचित कर सकती है।

*21(1) इस उद्देश्य से केंद्रीय सरकार, किसी भी केंद्रीय कानून के विधिभंग करने को, अधिसूचित अपराध (notified offence) घोषित कर सकती है।

*22 घोषित अपराध के मामले में अधिसूचित अधिकारी या एजेंसी और अन्यान्य क्षेत्रों में अन्यान्य एजेंसी यानी कोई भी अधिकारी या एजेंसी

डेवलपमेंट कमिश्नर की अनुमति बिना सेज अंचल में जाँच-पड़ताल नहीं कर सकती।

*23(1) राज्य सरकार सेज अंचल के विभिन्न दीवानी मामले और अधिसूचित अपराध के निर्णय के लिए हाईकोर्ट के प्रधान न्यायाधीश की सम्मति से एक या एकाधिक कोर्ट को निर्णय का दायित्व सौंप सकती है।

*23(1) निर्धारित कोर्ट के अलावा, अन्य किसी कोर्ट को इस किस्म के मामले में फैसला देने का अधिकार नहीं होगा।

*26(1) सेज की निर्माता और उत्पादन संस्था निम्नलिखित छूट उपलब्ध करेगी

(क) जेस में किसी भी सामग्री के आयात या कोई सेवा प्रदान करने पर किसी तरह का आयात शुल्क नहीं लगेगा।

(ख) जेस की तरफ से भारत से बाहर, किसी भी अंचल में, किसी सामग्री के निर्यात करने पर या कोई सेवा प्रदान करने पर, कोई कस्टम ड्यूटी नहीं लगेगी।

(ग) भारत के सेज से बाहर किसी जगह से, सेज में मँगाई गई सामग्री पर कोई उत्पादन शुल्क नहीं लगेगा।

(घ) अंतर्देशीय शुल्क अंचल से कोई सामग्री या सेवा, अगर सेज में ली गई और विदेश में स्थित कोई सेवा प्रदानकर्ता अगर सेज को सेवा प्रदान करता है तो अतीत में उसे प्रदत्त-टैक्स-प्रत्यार्पण (draw back) और अन्यान्य सुविधाएँ जारी रहेंगी।

(ङ) निर्माता या संस्था को टैक्स-योग्य सेवा प्रदान करने पर कोई सेवा-कर नहीं लगेगा।

(च) अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक सेवा केंद्र के ज रिये किसी अनावासी भारतीय द्वारा कर-योग्य सिक्योरिटी लेनदेन पर कोई सिक्योरिटी कर नहीं लगेगा।

(छ) केंद्रीय विक्रय-कर कानून में समाचार-पत्र को छोड़कर अन्यान्य विभिन्न सामग्रियों की खरीद-फरोख्त पर विक्रय-कर नहीं लगेगा।

*27 जेस निर्माता या उत्पादन संस्थाएँ, आयकर कानून में शामिल सभी सुविधाएँ प्राप्त करेंगे। सेज कानून में आयकर छूट की विशेष छूट का सीधे-सीधे उल्लेख नहीं किया गया है, फिर भी आयकर कानून के सेज के लिए दी गई खास-खास सुविधाओं का विवरण सेज कानून की दूसरी अनुसूचियों में दिया गया है, जिनके उल्लेखयोग्य अंश यहाँ दिए जा रहे हैं

1. ऑफ-शोर बैंक में किसी अनावासी के संचय पर प्राप्त सूद को उसकी आय का हिस्सा नहीं माना जाएगा। (धारा 10-ए)
2. जेस के किसी उत्पादक या सेवा संस्था की आय से होने वाले पहले पाँच वर्ष तक निर्यात सम्बन्धी लाभ या आय को पूरी तरह छूट दी जाएगी। (धारा 10-ए ए)
3. बाद के पाँच वर्ष तक इस नाम का सर्वाधिक पचास प्रतिशत पुनर्निवेशयोग्य संचित-भंडार के हिस्से की तौर पर आय में छूट दी जाएगी। (ऐ)
4. जेस में स्थित किसी भी संस्था को अगर घाटा हुआ, तो वह क्रमिक रूप से पुंजीभूत होता रहेगा या सेट-ऑफ कर सकेगा। (धारा 10-ए)
5. अगर किसी उत्पादक संस्था को सेज से बाहर के किसी अंचल से उत्पादन-व्यवस्था को सेज अंचल में हटा लाया जाए और इस वजह से मूलधन में मुनाफा हुआ, तो वह कर-योग्य नहीं होगा। (धारा 54-जी ए)
6. जेस के निर्माता का आय-निर्धारण करते समय, पहले 15 वर्षों के अंदर, उसकी इच्छा मुताबिक, किसी भी निरंतर 10 वर्ष तक, सेज केज स्यिेहुए 100 प्रतिशत लाभ को उसकी आय में छूट दी जा सकेगी। (धारा 80-1 ए बी)
7. जिस भी किसी देशी या विदेशी बैंक के आय-निर्धारण के समय सेज में स्थित उस बैंक की ऑफ-शोर शाखा की आय में 100 प्रतिशत ही, पहले पाँच वर्षों तक छूट दी जाएगी। उसके बाद के पाँच वर्षों में इस छूट का परिणाम होगा, ऑफ-शोर शाखा की आय का 50 प्रतिशत। (धारा 80 एल ए)
8. सेज के निर्माता द्वारा लाभांश के तौर पर प्रदत्त राशि पर बंटित मुनाफा-कर (Tax on distributed profit) लागू नहीं होगा। (धारा 115-0 (6)

32 केंद्रीय सरकार सेज प्राधिकारियों को उपयुक्त परिमाण में अर्थ-सहयोग या कज ॅ के तौर पर मंजूर करेगी।

*46 जेस में कार्यरत, निवासी या सेज में उपस्थित रहना ही होगा। ऐसे जिस किसी भी व्यक्ति को डेवलपमेंट कमिश्नर की तरफ से परिचय-पत्र दिया जाएगा।

*50 राज्य सरकार सेज के निर्माता और उत्पादनकर्ता को राज्यांतर के कर या शुल्क से छूट देने के लिए कानून बना सकती है। (प्रसंगवश, पश्चिम बंगाल सरकार ने इसी बीच वैट कानून में सेज की संस्थाओं के लिए विक्रय-कर छूट का इंतजाम कर दिया है।

*51 सेज की कोई भी धारा अगर प्रचलित किसी कानून की किसी धारा के साथ संगतपूर्ण न हो तो प्रचलित कानून में चाहे जो भी कहा गया हो, सेज कानून की धारा ही लागू होगी।

*53(1) उल्लिखित कानून लागू होने के दिन से ही, कोई भी सेज , भारत की शुल्क सीमा से बाहर स्थित, कोई भी अंचल गिना जाएगा। किसी भी कानून की विभिन्न धारा-उपधारा में नीतिगत और कार्यकारिता का उसके मूल लक्ष्य के मुताबिक विचार किया जाता है। उन सभी नीतियों या विभिन्न लक्ष्य का किस ढंग से उपयोग किया जाए, इसके लिए सहयोगी विधि (Rules) निर्धारित की जाती है। सेज कानून की मूल नीति या लक्ष्य का किस पद्धति से उपयोग किया जाए, इस उद्देश्य से 10 फरवरी, 2006 को संबद्ध विधियों का प्रकाशन किया गया। आइए, अब जरा The Special Economic Zone Rules 2006 के चंद उल्लेखयोग्य कानूनों पर नजर डाल लें :

5 (2) किसी सेज गठन के मामले में जमीन की न्यूतनम सीमा होगी

(क) एकाधिक राष्ट्रीय सामग्रियाँ उत्पादन के क्षेत्र में पूरा 1000 हेक्टेयर (2500 एकड़)

(ख) सेवा प्रदानकारी सेज के मामले में 100 हेक्टेयर (250 एकड़)

(ग) सेज अंचल की कम-से-कम 25 प्रतिशत जमीन प्रक्रियाकरण अंचल (Processing Area) होना चाहिए।

(घ) एक किस्म की सामग्री उत्पादन के सेज में 100 हेक्टेयर (250 एकड़)

5 (4) सेज के निर्माता या सह-निर्माता अगर अलग से किसी कम्पनी के जरिये सेज निर्माण करना चाहें, तो उस कम्पनी में निर्माता या सह-निर्माता का कम-से-कम 26 प्रतिशत शेयर होना चाहिए।

5 (5) सेज गठन के प्रस्ताव की सिफारिश करने से पहले, राज्य सरकार को निम्नलिखित इंतजाम करना चाहिए।

(क) स्टाम्प ड्यूटी समेत विविध राज्य कर और स्थानीय कर, शुल्क या महसूल से सेज के निर्माता और संस्था को छूट देना।

(ख) जेआ के प्रतिक्रियाकरण अंचल द्वारा विद्युत की खरीद या उत्पादन पर महसूल और कर में छूट देना।

(ग) जेआ में विद्युत उत्पादन परिवहन और बंटन की अनुमति देना।

(घ) जेआ में जल, विद्युत और अन्यान्य सेवाएँ प्रदान करना।

(ङ) श्रम विवाद कानून में सेज में शामिल संस्थाओं और श्रमिक कर्मचारियों के बारे में डेवलपमेंट कमिश्नर को निर्णय लेने का अधिकार देना।

(च) जेआ को अत्यावश्यक, सेवा क्षेत्र घोषित करना।

(छ) सेज के निर्माता और संस्थाओं के लिए एक विंडो-पद्धति का प्रबंध करना।

11 (10) जेआ के निर्माता अ-प्रक्रियाकरण अंचल में (Non pocessing area) व्यापारिक और सामजिक उद्देश्य के लिए यथा, स्कूल, कॉलेज, अस्पताल, होटल, मनोरंजन व्यवस्था, आवासीय या व्यापारिक भवन वगैरह के निर्माण के लिए जमीन की मंजूरी दे सकता है। सेज का व्यापारिक और सामाजिक ढाँचा निर्माण के क्षेत्र में भी कर में छूट की सुविधा उपलब्ध होगी।

23 जेआ के निर्माता या संस्थाएँ भारत के अंतर्देशीय शुल्क अंचलों से जो-जो खरीद करेंगे, सभी सामग्री निर्यात में गिनी जाएगी और उनके लिए प्राप्य सभी सुविधाएँ उपलब्ध होंगी।

27(1) जेआ के निर्माता और संस्थाएँ अंतर्देशीय शुल्क अंचल से शुल्क कर या सेस के बिना ही सामग्रियाँ खरीद सकते हैं या विक्रेता संस्थाओं द्वारा निर्यात के रूप में गिना सकते हैं।

27(4) संस्थाएँ और निर्माता वर्ग कोई भी देशी या विदेशी लीजिं ग कंपनी से बिना शुल्क या बिना कर दिए, मूलधन द्रव्य या इजारा ले सकते हैं।

41(1) जेआ में स्थित कोई भी संस्था, उत्पादन प्रक्रिया का कोई भी हिस्सा अंतर्देशीय शुल्क अंचल में स्थित या सेज में स्थित किसी भी संस्था को ठेका दे सकती है। ठेके का परिमाण, पिछले वर्ष उस संस्था द्वारा उत्पन्न सामग्रियों की कुल कीमत से ज यादा नहीं होना चाहिए।

43 जेआ की कोई भी संस्था, अंतर्देशीय शुल्क अंचल में स्थित किसी भी निर्यातक की तरफ से उत्पादन का ठेका ले सकती है।

44 जेआ में स्थित कोई भी संस्था अगर कृषि सम्बन्धी उत्पादन करती हो, तो वह संस्था अंतर्देशीय शुल्क अंचल में साझा खेती करा सकती है और साझा खेती अंचल में खाद, बीज, रासायनिक वगैरह भेज सकती है।

47(1) जेआ की कोई भी संस्था, अंतर्देशीय शुल्क अंचल में भी कोई सामग्री या सेवा

विक्रय कर सकती है।

47(3) सेज में उद्धृत विद्युत अंतर्देशीय शुल्क अंचल में भी बंटित किया जा सकता है।

53 सेज की संस्थाओं को उत्पादन की शुरुआत से ही पाँच वर्ष के अंदर-अंदर कुल विदेशी अर्थ का उपार्जन करना होगा यानी इस निर्धारित समय के अंदर, संस्था को निर्यात के जरिये कुल आय, उत्पादन सम्बन्धी कुल व्यय के मुकाबले, विदेशी मुद्रा के तौर पर अधिक होनी चाहिए।

75 सेज में सामग्रियों के आगमन या निर्गमन के मामले में आमतौर पर किसी प्रकार की तलाशी या जाँच नहीं की जाएगी। निर्माता या संस्था के निजी शंसापत्र के आधार पर ही सामग्रियों का संचलन मान लिया जाएगा।

सेज विधि कानून तैयार हो जाने के बाद, विभिन्न राज्यों से केंद्रीय सरकार के पास सेज गठन के ढेरों प्रस्ताव आए। वस्तुतः कौन कितना प्रस्ताव भेज सकता है? इस बारे में विभिन्न राज्य सरकारों में, मानो एक उन्मत्त प्रतियोगिता शुरू हो गई। साथ ही महाराष्ट्र-उत्तरप्रदेश-उड़ीसा समेत विभिन्न राज्यों में सेज गठन के प्रस्ताव के विरुद्ध जन-आंदोलन का सूत्रपात हुआ। आंदोलन के बावजूद केन्द्रीय सरकार ने समूचे देश भर में और भी 35 सेज गठन के प्रस्तावों का अनुमोदन किया।

इस बीच, पश्चिम बंगाल के नंदीग्राम में केमिकल हब तैयार करने के लिए जमीन अधिग्रहण के सरकारी प्रस्ताव के विरुद्ध तुमुल जन-संग्राम शुरू हो गया, जिसकी व्याप्ति और विस्तार ने सन् 1942 के अगस्त विद्रोह के दिनों को साकार कर दिया। नंदीग्राम जन-संग्राम की पृष्ठभूमि में केंद्रीय मंत्रिमंडल ने सेज कानून की समीक्षा के लिए एक कमिटी का गठन किया। इसी के समानांतर 14 मार्च 2007, को पुलिस और सी. पी. एम. की गुंडा फौज ने नंदीग्राम के विभिन्न हिस्सों में नारकीय तांडव चलाया और फलस्वरूप प्रत्यक्षदर्शियों के मुताबिक सैकड़ों औरत-मर्द-बच्चे मौत के घाट उतार दिए गए। हज ारों से ज यादा लोग घायल हुए। असंख्य किशोरी-युवती-प्रौढ़ा, यहाँ तक कि बूढ़ी औरतों का बलात्कार हुआ। उद्योग के नाम पर नंदीग्राम गण-हत्या ने सेज वितर्क को नई सीमा तक पहुँचा दिया। इस घटना ने समूचे विश्व में तहलका मचा दिया।

नंदीग्राम गण-हत्या के बाद, महीने भर के अंदर केंद्रीय मंत्रिमंडल की कार्यकारी कमिटी ने अपनी सिफारिश पेश कर दी। ये सिफारिशें निम्नलिखित

हैं

1. जेश अंचल को सर्वोच्च सीमा निर्धारण का प्रस्ताव दिया गया। एक किस्म के उत्पाद के लिए सेज के क्षेत्र में 1 हजार हेक्टेयर और बहुजातीय उत्पाद सामग्रियों के लिए सेज क्षेत्र में 5000 हेक्टेयर की सर्वोच्च सीमा की सिफारिश की गई।
2. किसी भी सेज के मामले में राज्य सरकार जमीन अधिग्रहण न कर सके यह प्रस्ताव भी दिया गया। यह सिफारिश भी की गई कि सेज के निर्माताओं को जमीन सीधे-सीधे खरीदनी होगी।
3. जिस किसी भी सेज की कम-से-कम 50 प्रतिशत ज मीन, प्रक्रियाकरण अंचल के तौर पर उपयोग की जाए।
4. जेश स्थापन के लिए जिन समस्त परिवारों को उजाड़ा जाए, उन लोगों के हर परिवार में से, किसी एक सदस्य को सेज में शामिल किसी-न-किसी संस्था में नौकरी दी जाने की कोशिश की जाए। या फिर इन तमाम परिवारों को सेज निर्माता-कंपनी के शेयर दिए जाएँ।

   22 अप्रैल को, मुख्य रूप से सी. पी. एम. के दबाव में केंद्रीय मंत्रिमंडल ने यह फैसला लिया कि विशेष मामलों में राज्य सरकार ज मीन अधिग्रहण कर सकती है, लेकिन उसकी सर्वोच्च सीमा होगी 30 प्रतिशत और सरकार ज मीन अधिग्रहण तभी कर सकती है, जब सेज निर्माता थोड़ी-सी जम ीन खरीद लें। हालाँकि इन तमाम सिफारिशों के आधार पर, अभी तक सेज कानून या विधि संशोधित नहीं हुई, फिर भी सेज कानून की समीक्षा करते समय, इन बातों को भी ध्यान में रखना होगा।

सेज कानून : विश्लेषण का प्रयास

अभी तक, हमने सेज कानून और विधि के विभिन्न महत्त्वपूर्ण हिस्सों की बिना किसी टीका-टिप्पणी के यथावत् चर्चा की। जिन लोगों को कानून-चर्चा की जानकारी नहीं है, उन लोगों को यह हिस्सा नीरस और अर्थहीन लग सकता है। लेकिन सेज नामक विषय को सरकार या सत्ताधारी विभिन्न दल ठीक किस नज र से देखते हैं, अगर यह समझ न लिया जाए, तो सेज का असली तात्पर्य भी समझ में नहीं आएगा या बस, ऊपरी-ऊपरी तौर पर समझ में आएगा। आरंभिक हिस्से में हमने देखा कि सेज के गठन और संचालन के दो परस्पर संयुक्त पक्ष हैं एक, प्रशासनिक और दूसरा विभिन्न छूट या सुविधाएँ। आइए, अब हम पूर्वोल्लिखित सेज कानून के विभिन्न

हिस्सों पर विचार करें, ताकि उन सबका सार-मर्म समझा जा सके।

सेज : देश में विदेश

सेज कानून की धारा 53 (1) में साफ-साफ कहा गया है कि सेज को भारत की शुल्क-सीमा से बाहर स्थित कोई अंचल माना जाएगा। सरसरी तौर पर यह लग सकता है कि शुल्क-सीमा शब्द का अर्थ सिर्फ टैक्स या शुल्क वसूली के मामले में ही लागू है लेकिन ज रा गहराई से विचार किया जाए, तो पता चलता है कि इस शब्द में बेहद गहरे अर्थ छिपे हुए हैं। कौन-सी सरकार या राष्ट्र टैक्स या शुल्क वसूल करता है या कर सकता है, उसका मूलभूत आधार है सुनिर्दिष्ट इलाके में सरकार की सार्वभौम क्षमता की प्रतिष्ठा। भारत सरकार लाख चाहे, वह नेपाल या मालद्वीप से कोई शुल्क वसूल नहीं कर सकती, क्योंकि नेपाल या मालद्वीप भारत के अधिकार में नहीं है यानी नेपाल या मालद्वीप के भूखंड पर भारत राष्ट्र का सार्वभौम अधिकार लागू नहीं होता। लेकिन अगर किसी तरह इन सब देशों पर भारत राष्ट्र की सार्वभौम क्षमता लाद दी जाए, तो इन सब देशों से भी भारत सरकार टैक्स या शुल्क वसूल कर सकती है। जैसा कि सिक्किम के मामले में घटा है। सन् 1974 से पहले के सिक्किम प्रदेश से भारत सरकार कोई टैक्स वसूल करने की अधिकारी नहीं थी। लेकिन सिक्किम जब भारत देश में शामिल हो गया, तब भारत सरकार ने यह अधिकार अर्जित कर लिया, अस्तु यह बात स्पष्ट है कि किसी भी अंचल को किसी देश की शुल्क-सीमा में खींच लाने का अर्थ है, उस अंचल पर इस देश की सार्वभौम क्षमता की प्रतिष्ठा करना।

अब, विपरीत दिशा से आगे बढ़ें तो यह भी स्वतः सिद्ध तरीके से कहा जा सकता है कि किसी भी देश की शुल्क-सीमा से किसी अंचल के निकल जाने का अर्थ है, उस अंचल पर से उस देश की सार्वभौम क्षमता का लुप्त हो जाना। एक ज माने में अंग्रेज सरकार, अमेरिका या भारत से कर-वसूली की अधिकारी थी, क्योंकि ये दोनों देश अंग्रेज राष्ट्र की सार्वभौम सत्ता के अधीन थे। चूंकि आज यह अधिकार उसे नहीं है, इसलिए अंग्रेज सरकार, भारत या अमेरिका पर कोई टैक्स नहीं लाद सकती। यानी भारत या अमेरिका, अंग्रेज सरकार की सार्वभौम क्षमता के बाहर जा चुके हैं, इसलिए ये दोनों देश ब्रिटिश शुल्क-सीमा के बाहर के अंचल बन चुके हैं। ऐसी स्थिति में, सेज भारत की शुल्क-सीमा से बाहर है, यह कहने का क्या मतलब है? इसका एक ही मतलब है सेज मानो भारत राष्ट्र की सार्वभौम क्षमता के अधीन नहीं हैसेज एक स्वयंशासित अंचल है।

यहाँ तक पढ़ने के बाद, कोई-कोई यह कह सकता है कि यह विषय तो ज रा गूढ़ और जटिल हो गया है। भारत सरकार जब खुद ही कानून पास करके, सेज को भारत की शुल्क-सीमा के बाहर का अंचल बनने की स्वीकृति दे रही है, तो वहाँ सार्वभौम क्षमता नष्ट होने का सवाल ही कहाँ उठता है? इस सवाल के जवाब में यह कहा जा सकता है कि भारत राष्ट्र की सार्वभौम क्षमता का सृजन, ब्रिटिश पार्लियामेंट में स्वीकृत कानून के मुताबिक, सन् 1947 की मई में हुआ था। यानी यह मान लेना होगा कि भारत राष्ट्र की सार्वभौमिकता जैसी कोई बात नहीं, भारत राष्ट्र दरअसल ब्रिटिश राष्ट्र की सार्वभौमिकता के अधीन है। दरअसल, सवाल कानून पास होने का नहीं है, सवाल है, वास्तविकता का। चलिए, हम सेज कानून के और कई मुद्दों पर विचार करें।

समान्तराल प्रशासन

हम सब यह जानते हैं कि राष्ट्र या सरकार का काम सिर्फ टैक्स या शुल्क-वसूली तक ही सीमाबद्ध नहीं है, बल्कि आर्थिक-सामाजिक-राजनैतिक-सांस्कृतिक जीवन यानी समूचे देश के समस्त निवासियों की समग्र जीवनयात्रा के विभिन्न क्षेत्रों पर ही राष्ट्र के तत्वावधान में निगरानी रहती है। इसलिए अनगिनत किस्म के विधि-कानून तैयार किए जाते हैं। इसलिए राष्ट्र के अंतर्गत विभिन्न किस्म के विभाग तैयार किए जाते हैं और उनके हाथों में कानून तोड़ने वालों के खिलाफ कदम उठाने के लिए कानून-मुताबिक अनगिनत अधिकार सौंप दिए गए हैं। भारत भी उसका व्यतिक्रम नहीं है। भारत में आम प्रशासनिक व्यवस्था, जि लाशासक, महकमा शासक, वीडीओ इसी राह पर चलते हैं। इसके साथ-साथ आयकर, कस्टम्स, उत्पादन शुल्क, विक्रयकर, श्रम-विवाद, नारी-निर्यातन, परिवेश-रक्षा वगैरह भिन्न-भिन्न विषयों से जुड़े, अलग-अलग कानून और हर कानून के प्रयोग के लिए अलग-अलग विभाग मौजूद हैं। हर विभाग अपने-अपने निजी क्षेत्र में, अन्यान्य विभाग निरपेक्ष तरीके से, अपनी-अपनी जिम्मेदारी का पालन करने में क्षमतासंपन्न है।

हम पहले ही देख चुके हैं कि सेज कानून की धारा 4 में, सेज अंचल के सामग्रिक निदेशक और विभिन्न प्रशासनिक अधिकारों के निर्वहन के लिए, एक डेवलपमेंट कमिश्नर की नियुक्ति की बात कही गई है। सेज जल्द-से-जल्द गठित हो और निर्यात में वृद्धि हो, यह सुनिश्चित करना ही डेवलपमेंट कमिश्नर का मुख्य काम है। साथ ही धारा 21* (1) में यह कहा गया है कि भारत के विभिन्न केंद्रीय क ानून के विविध या किसी निर्दिष्ट क ानून-भंग को केंद्रीय सरकार ने सेज के मामले में

अधिसूचित अपराध (notified offence) घोषित किया है। लेकिन धारा 20 में यह कहती है कि केंद्रीय सरकार द्वारा अधिसूचित अधिकारी या एजेंसी को छोड़कर, अन्य कोई एजेंसी, उन सब के बारे में सेज अंचल में कोई जाँच-पड़ताल, अनुसंधान, तलाशी या कब्ज ा नहीं कर सकती। अन्यान्य मामलों में संबद्ध विभाग, अपने-अपने क्षेत्र में कानून का उल्लघंन तो नहीं हो रहा है, इस पर निगरानी रख सकते हैं लेकिन किसी भी मामले में, भले वह अधिसूचित अपराध हो या न हो, डेवलपमेंट कमिश्नर की पूर्व-अनुमति के बिना, सेज अंचल में कोई भी एजेंसी तलाशी, जाँच-पड़ताल या कब्ज ा नहीं कर सकती।

अधिसूचित अपराधों की तालिका तैयार करने का अर्थ है, सेज के हित में एक-एक आपात्-स्वाधीन विभाग को निजी कानूनों के प्रयोग करने की क्षमता पर आघात करना और यह तालिका जितनी लंबी होगी, क्षमता पर चोट खाए हुए विभागों की संख्या उतनी ही बढ़ती जाएगी। वैसे, किसी सरकारी विभाग के अधिकार खत्म हुए या नहीं, इस बारे में आम लोगों को कोई फर्क नहीं पड़ता। लेकिन, हकीकत में इस घटना का अर्थ अपरिसीम है। सच तो यह है कि ऐसे एक-एक विभाग राष्ट्रीय सार्वभौमिकता के आंशिक एजेंट के तौर पर ही किसी क ानून के प्रयोग का अधिकार रखते हैं। अब अगर देश के मानचित्र के एक हिस्से में उस विभाग के कार्य, किसी दूसरी एजेंसी के हाथों में सौंप दें, तो इसका मतलब यह हुआ कि राष्ट्रीय सार्वभौमिकता का जो आंशिक अधिकार उस दफ्तर के जिम्मे था, संबद्ध अंचल में सार्वभौमिकता का वह हिस्सा कार्यकारी नहीं है यानी यह अंचल देश के मानचित्र में मौजूद जरूर है, मगर संबद्ध विभाग के लिए वह विदेश बन जाता है।

अब कोई-कोई यह सवाल कर सकता है कि निर्यात सम्बन्धी उत्पादनों को प्रोत्साहन देने के लिए ही सेज का सृजन किया जा रहा है, ताकि वे असंख्य कानून और असंख्य विभाग कदम-कदम पर रोक-टोक के ज रिये, निवेशकों को निरुत्साहित न करें, इसके लिए एक दायित्वप्राप्त एजेंसी की सिफारिश की गई है। यह शुभ प्रस्ताव है। लेकिन, इस मामले में एक समस्या भी है। एक-एक कानून का अपना-अपना कार्यक्षेत्र है, अपनी-अपनी स्वतन्त्र विशिष्टता है और यह बिल्कुल निजी गठन है। बिल्कुल उसी तरह हर कानून के अंतर्गत देखरेख की पद्धति की भी निजी विशिष्टता है। भूमि राजस्व सम्बन्धी कानून के तरीके के साथ, परिवेश-दूषण सम्बन्धी कानून की देख-रेख के तरीके में कोई संगति नहीं है। सबसे बड़ी बात यह कि एक-एक विभाग में कार्यरत अधिकारियों को ख ास किस्म के वृत्तिगत प्रशिक्षण और तजुर्बों के ज रिये एक-एक खास कार्यप्रणाली का सृजन होता है, जो उन लोगों

को अपने क्षेत्र में विशेषज्ञ बना देता है, अगर ठीकठाक कार्य करना है, तो डकैती की जाँच-पड़ताल करना, पुलिस द्वारा ही संभव है, लेकिन आयकर की धोखाधड़ी को पकड़ना, आयकर अधिकारियों के लिए ही सहज कार्य होगा।

किसी एक एजेंसी के जरिये विभिन्न अधिसूचित अपराधों की पड़ताल कराने के दो अर्थ हो सकते हैं। या तो अधिसूचित एजेंसी और उसके कर्मियों की फौज को विभिन्न कानूनों के बारे में अक्षरशः जानकारी है और उसके प्रयोग के तरीके के बारे में जन्मजात विशेषज्ञ हों या फिर सभी मामलों में एक ही किस्म का प्रयोग थोपने के नाम पर, दरअसल सभी मामलों का विसर्जन कर देने की धन्धेबाजी है। पहली बात, हरगिज संभव नहीं है। जो लोग वकील हैं, उनमें भी कोई दीवानी के बारे में, कोई फौजदारी या टैक्सों के बारे में विशेषज्ञ होता है। जो लोग कानूनदां हैं या कानून के क्षेत्र में ही आगे बढ़ रहे हैं, वे लोग ही जब सभी मंच पर आसन दखल करने की कोशिश नहीं करते, तो इस क्षेत्र में तो कानून की सूझ-बूझ के साथ-साथ खोज-बीन और जाँच-पड़ताल का प्रंसग भी जुड़ा हुआ है। अब बच रही दूसरी संभावना। यानी किसी भी कानून का ठीक-ठीक प्रयोग न किया जा सके, ऐसा कोई बेहतर प्रबंध करना। कुल मिलकर हकीकत क्या है? सरकार ने ऐसी एक व्यवस्था चालू कर दी, जिसकी वजह से देश के अलग-अलग हिस्से में राष्ट्रीय कानून ठीकठाक तरीके से लागू न हो सके। इस तरह भारत के संविधान में निर्दिष्ट आम कानून के प्रशासन के साथ-साथ सेज में एक समानांतर प्रशासनिक व्यवस्था चालू होगी। जहाँ प्रचलित कानून का ठीक-ठीक प्रयोग न करना ही, मौलिक कानून बन जाएगा।

आधुनिक नवाबशाही

इस बात की चर्चा पहले ही की जा चुकी है कि सेज अंचल की किसी भी संस्था में, डेवलपमेंट कमिश्नर की अनुमति के बिना, किसी भी तरह की जाँच-पड़ताल, तलाशी या कुछ ज ब्त नहीं किया जाएगा। यानी सेज अंचल की किसी भी संस्था के खिलाफ, अगर अन्य किसी स्रोत से यह शुरुआती संकेत मिले भी कि उस संस्था ने कोई कानून तोड़ा है, तो भी उस संस्था के विरुद्ध पड़ताल की अनुमति प्राप्त करने के लिए डेवलपमेंट कमिश्नर को आवेदन करना होगा। अगर वे मेहरबानी करके अनुमति प्रदान करें, तभी उस संस्था के खिलाफ जाँच शुरू की जा सकती है। अगर कहीं अनुमति न मिली तो चाहे जितने ही निर्भर योग्य सूत्र से और चाहे जितने भी अकाट्य प्रमाण-समृद्ध तथ्य मिले हों, सेज में स्थित किसी भी संस्था के बारे में

पड़ताल शुरू नहीं की जा सकती। विविध तथ्य-प्रमाण हजम करके, कानून की समदर्शिता नीति का श्राद्ध कर देना होगा। यानी सेज अंचल में किसी भी कानून का ठीक-ठीक प्रयोग किया जा सकेगा या नहीं, यह बात डेवलपमेंट कमिश्नर नामक किसी पदाधिकारी की मर्जी पर निर्भर करती है। बेहतर तो यह है कि उन जनाब को सिर्फ कमिश्नर कहने के बजाय महामान्य नवाब बहादुर कहना चाहिए।

प्रशासनिक व्यवस्था की सुविधा के लिए हर राज्य को जि ला स्तर पर बाँटा गया है। हर जिले का जिलाशासक उस जिले का आम प्रशासनिक प्रधान है और उस ि जले की आर्थिक-सामाजिक-राजनैतिक परिस्थिति का वह ही प्रशासनिक नियन्ता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि उस जिले के किसी भी व्यावसायिक प्रतिष्ठान या व्यक्ति के खिलाफ, आयकर कानून तोड़ने का आरोप लगाने के लिए, आयकर दफ्तर उसके खिलाफ जाँच या तलाशी की अनुमति माँगते हुए जिला शासक को आवेदन करेगा। लेकिन हकीकत में ऐसा कभी नहीं होता। आयकर विभाग अपनी मर्जी माफिक जाँच और तलाशी करता है। उन्हें जिलाशासक की अनुमति की कोई ज रूरत नहीं होती। विभिन्न कानून प्रयोग करने वाली संस्था के मामले में भी यही सच है। समूचे देश में कानून का शासन इसी तरह चलता है या कम-से-कम इसी तरह चलना चाहिए। लेकिन सेज के क्षेत्र में मामला बिल्कुल विपरीत है। यानीेज्ञ के अंतर्गत कोई भी संस्था, अगर कोई कानून तोड़ती है, तो उसे डेवलपमेंट कमिश्नर की पूर्व अनुमति नामक एक प्रारंभिक रक्षा-कवच ओढ़ने का मौका मिल जाएगा। और व्यवसायी प्रतिष्ठान में राष्ट्रीय रक्षा कवच को, अपने स्वार्थ के लिए, किस तरीके से अपनी काँख में दबा लेते हैं, यह हम बखूबी जानते हैं।

चलिए, इस विषय को एक और नज रिए से देखा जाए। जिलाशासक को जिले का भूमि-राजस्व वसूल करने का भी अधिकार प्राप्त होता है। इसी वजह से उसे 'कलेक्टर' भी कहा जाता है। सेज किसी-न-किसी जिले में स्थित होगा। अब, जिलाशासक के मन में यह शक जागे कि समग्र रूप से सेज या उसके अंतर्गत किसी संस्था ने भूमि राजस्व सम्बन्धी कोई कानून तोड़ा है, तो वे क्या करेंगे? उन्हें डेवलपमेंट कमिश्नर को लिखित आवेदन करना होगा, जाँच की अनुमति माँगनी होगी। यानी जिलाशासक, जो जिले का सर्वोच्च प्रशासनिक प्रधान तैनात किया गया है, वही अधिकारी जिले के ही एक हिस्से में, अपने समानांतर अधिकारी की अनुमति पर निर्भर होगा। इसका मतलब यह हुआ कि प्रशासन के आम प्रधान पर अनिवार्य रूप से हस्तक्षेप और सबसे बड़ी बात यह कि सेज को, सार्वजनिक प्रशासनिक व्यवस्था और कानूनी ढाँचे से भी ऊपर, किसी दैवी महत्व के विषय के रूप में

स्वीकृति देना। इसका नतीजा भले कुछ भी हो, राष्ट्रीय समदर्शिता की नीति की कोई प्रासंगिकता नहीं रह जाती।

अब यह सवाल उठ सकता है कि जिलाशासक के अधिकार और प्रशासनिक अधिकारों में अगर हस्तक्षेप होता भी है, तो आम लोगों को क्या फर्क पड़ता है। कई सालों से जिलाशासक या अन्यान्य कानून के अधिकारियों की क्षमता और अधिकार अटूट रहने के बावजूद कोई शख्स जन-साधारण के अधिकार और उन लोगों के हितों की रक्षा के लिए, आगे नहीं आया। लेकिन सेज के प्रशासनिक ढाँचे के बारे में, हमने जो चर्चा की, उस बारे में एक और भी आशंका जगती है। आज अगर किसी कारखाने का कोई मज दूर थाने में जाकर यह शिकायत करे कि उसने कारखाना मालिक के किसी अन्यायपूर्ण हुक्म का विरोध किया और मालिक ने उसे मारा-पीटा, ऐसी स्थिति में अगर कोई खास दबाव न आए, तो पुलिस कोई कार्रवाई नहीं करती। वैसे प्रचलित कानून के मुताबिक थाने में आकर अगर कोई शिकायत करे, तो वह रपट लिखना और उस आधार पर जाँच करना जरूरी है। ऐसे में थाना अगर कोई जाँच-पड़ताल न करे, तो यह पुलिस द्वारा कानून तोड़ने की घटना मानी जाएगी। असल में कितनी दूर तक क्या होता है, हम सभी लोग जानते हैं। लेकिन, वास्तविक रूप में यह पुलिस अधिकारियों की गलती और कर्तव्य के प्रति लापरवाही है, यह तो सभी लोग मानेंगे।

अब, अगर सेज की किसी घटना के मामले में ऐसी कोई घटना घटे, तो क्या स्थिति होगी? अन्याय का शिकार, श्रमिक ने संबद्ध थाने में शिकायत की और यह भी मान लिया जाए कि दबाव डाले जाने पर, उसकी शिकायत दर्ज भी कर ली गई। उसके बाद? जिम्मेदार पुलिस अफसर, डेवलपमेंट कमिश्नर को इसकी जानकारी देते हुए, जाँच की अनुमति माँगता है। उसके बाद, दिन गुज रे, महीने गुज रे, वर्ष गुज रे अनुमति नहीं मिली क्योंकि सेज कानून या विधि में इस प्रसंग में एक भी वाक्य नहीं लिखा गया है कि डेवलपमेंट कमिश्नर कितने दिनों के अंदर अनुमति देगा। इस बीच, शिकायतकर्ता श्रमिक की छँटनी हो जाती है। वह श्रमिक, श्रमिक विभाग की शरण में जाता है। डेवलपमेंट कमिश्नर की अनुमति न मिलने की वजह से, श्रम विभाग भी हाथ समेटे बैठा रहता है। पिछला उदाहरण और वर्तमान प्रसंग में सिर्फ एक फर्क है। पहले मामले में पुलिस ने गैरकानूनी काम किया और दूसरे मामले में पुलिस और डेवलपमेंट कमिश्नर दोनों ने ही बिल्कुल कानून-संगत कदम उठाया। यह सच है कि क्षमताशील लोग हत्या करते हैं, तो उन पर मुकद्दमा नहीं चलता, लेकिन क्षमताशील लोगों द्वारा हत्या करने की क्षमता कानून-संगत है अगर ऐसा कुछ होता, तो परिस्थिति और ज यादा भयंकर हो उठती, जहाँ गणतांत्रिक अधिकार

का प्रसंग ही गैर-कानूनी हो उठता। सेज कानून की चर्चित धाराएँ बिल्कुल इसी किस्म का परिवेश रचने की कोशिश कर रही हैं।

शालिग्राम शिला

हमारे देश में पुलिस-प्रशासन आमतौर पर कभी भी आम लोगों के साथ खड़ी नहीं होती। इसकी मुख्य वजह है कि समाज की शांति-शृंखला की संज्ञा, मालिकों में पक्ष के खड़े होकर ही निर्धारित की गई है। इसीलिए कारखानों में हड़ताल के दौरान मालिकों को यह हक है कि वे लोग कारखानों में मौजूद सामान, यहाँ तक कि मशीन वगैरह भी कारखानों के बाहर ला सकते हैं। हड़ताल का मतलब है, श्रमिकों द्वारा कारखानों के कामकाज बंद कर देना। ऐसे में, मालिकों को अगर यह अधिकार है, तो मालिक जब खुद ही कारखाने का कामकाज बंद कर देता है यानी लॉक-आउट की घोषणा करता है, तब उसके पास यह अधिकार नहीं होना चाहिए। लेकिन वास्तविकता यह है कि लॉक-आउट के समय भी सारा सामान कारखाने से बाहर ले जाने का पूरा अधिकार, मालिकों को होता है। यानी गणतांत्रिक अधिकारों का सवाल शुरू से ही मालिकों के पक्ष में ही झुका हुआ है। इसके समानांतर दौलतमंद लोगों की आर्थिक और सामाजिक क्षमता की भी इस मामले में बड़ी भूमिका है।

हम चाहें या न चाहें, समाज में, खासकर राष्ट्रीय ढाँचे में दुर्नीति प्रबल परिमाण में मौजूद है। सरकारी अधिकारी हमेशा सिर्फ आर्थिक आकांक्षा से ही दुर्नीतिपरायण हो उठते हैं। यह बात भी सही नहीं है। वैसे इस मामले में आर्थिक लेनदेन की भूमिका ही सर्वोपरि है। लेकिन इसके अलावा भी विविध सामाजिक सुयोग-सुविधा की चाह की वजह से भी यह परिणति होती है। 'देखो, तुम्हारा काम मैं कर दूँगा, बदले में तुम्हें मेरे भांजे को अपनी कंपनी में किसी ऊँचे पद पर नौकरी देनी होगी' ऐसी माँगें अकसर ही सुनने में आती हैं। अब, वजह चाहे आर्थिक हो या सामाजिक, ऐसी सुविधाएँ या मौके सिर्फ आर्थिक और सामाजिक तौर पर दौलतमंद लोग ही दे सकते हैं। अस्तु महज लेनदेन के माध्यम से भी, वे लोग अपने खिलाफ उठाये गये इल्ज ामों को दबा देते हैं। राजनैतिक संपर्क भी इस मामले में एक महत्त्वपूर्ण हथियार है।

ऐसे में, सेज में क्या स्थिति हो सकती है? आरोप के आधार पर किसी संस्था के खिलाफ जाँच-पड़ताल की जाए या नहीं, इस सवाल का जवाब देने का अधिकार, एकमात्र डेवलपमेंट कमिश्नर को है, अब उसे खुश रखा जाए, तो वह इस मामले में चुप्पी साध लेगा। अगर विभिन्न दबावों में आकर अनुमति देनी ही पड़ी, तो

यथासंभव अधिक-से-अधिक समय बर्बाद करके ही अनुमति दी जाएगी, ताकि अपराधी संस्था इस बीच अपनी कमज ोरियाँ सुधार ले। यानी इस व्यवस्था में डेवलपमेंट कमिश्नर नामक अधिकारी के अधिकारों का दुरुपयोग करके अपनी हरकतों से संस्थाओं को फायदा उठाने का मौका देता है, नतीजा यह होगा कि सेज के अंतर्गत, संस्थाएँ कानूनी और गैर-कानूनी तरीके से भारत में लागू विभिन्न कानूनों को ठेंगा दिखाते हुए चल सकती हैं। निवेशकर्ताओं को इस सवाल के बारे में आश्वस्त करने के लिए ही सेज कानून में डेवलपमेंट कमिश्नर की पूर्व-अनुमति की अनिवार्यता शामिल की गई है।

अनुमति न देने के बारे में डेवलपमेंट कमिश्नर के हाथ में काफी तर्क भी होंगे। निर्यात के लक्ष्य से ही उत्पादन और निवेश में वृद्धि के लिए ही सेज तैयार किया गया है। इसकी 53 नं. धारा में यह साफ-साफ कहा गया है कि उत्पादन शुरू करने के बाद, 5 वर्ष के अंदर, किसी भी संस्था को कुल विदेशी मुनाफा अर्जित करना होगा। इस बात को और स्पष्ट किया जाए, तो सेज के अंतर्गत संस्थाओं पर यही एकमात्र निर्देशात्मक विधि लागू की गई है। अब कोई भी डेवलपमेंट कमिश्नर यह कह सकता है कि किसी संस्था के विरुद्ध जाँच-प्रक्रिया चलाने से, उस संस्था के कुल विदेशी मुनाफा अर्जन करने में रुकावट आ सकती है। इसके अलावा किसी संस्था के विरुद्ध जाँच या तलाशी चलाने से, समग्र रूप से निवेशकर्ताओं को गलत संदेश मिल सकता है, फलस्वरूप निवेश में भी बाधा आ सकती है। सेज जब गठित किया गया है, तो निर्यात-वृद्धि के लिए और इसके लिए विविध विधि-कानूनों के प्रयोग को तुच्छ कर दिया गया है, तो इसका एक और एकमात्र लक्ष्य बन जाता है निवेश-रक्षा और निवेश-वृद्धि।

विभिन्न पृष्ठभूमि में इस किस्म के तर्क हम बार-बार सुनते आए हैं। पश्चिम बंगाल के चटकल और चाय-बागानों के मालिक, कंपनी के प्रोविडेंट फंड, ईएसआई वगैरह में धोखाधड़ी करने में काफी पहले ही रिकार्ड स्थापित कर चुके हैं। लेकिन इस बारे में अभी तक किसी एक भी कंपनी के खिलाफ कोई कदम नहीं उठाया गया। इसका एक ही कारण दिखाया गया है। इस किस्म की कोई व्यवस्था की गई, तो उद्योगपतियों को यह संदेश मिलेगा कि पश्चिम बंगाल में उद्योग-अनुकूल परिवेश नहीं है। ऐसे में, यहाँ नए उद्योगों के स्थापन की संभावना खत्म हो जाएगी। इसलिए यह मुर्गी सोने के अंडे देगी, इस उम्मीद के साथ आजकल चोरी-चकारी तक हजम कर लेना। एक राष्ट्रीय कर्तव्य माना जाता है। सेज की वस्तुगत प्रस्तावना के बिना ही, हम सब इस किस्म की सफाई सुनने के अभ्यस्त हो चुके हैं। वैसे जहाँ विविध

विधि-कानून के बिना ही सेज गठित होगा, वहाँ इसके विपरीत ही सुनेंगे, जो लोग यह सोचते हैं, वे मानो मूर्खों की दुनिया में रहते हैं।

मनमाना आनंद-विहार

हम यह भी याद रखें कि धारा 23 के मुताबिक सेज अंचल के सभी दीवानी मामलों और अधिसूचित अपराधों की सुनवाई के लिए निर्दिष्ट (designated) कोर्ट के अलावा अन्य किसी कोर्ट में सुनवाई नहीं होगी। निर्धारित कोर्ट की राय के खिलाफ, जिला अदालत को नज रअंदाज करके सीधे-सीधे हाईकोर्ट में अपील करना होगा और अंत में धारा 51 में कहा गया है कि सेज कानूनों का कोई भी हिस्सा और अन्यान्य किसी कानून में विरोध नजर आया, तो सेज कानून ही लागू होगा। कुल मिलाकर, वस्तुस्थिति क्या है? सेज में निवेशकर्ताओं को सरकार यह भरोसा देती है कि निवेशकर्ता सेज में कारोबार करते हुए, सिर्फ भारत-राष्ट्र के प्रचलित विधि-कानून के हाथों से विशेष रक्षा-कवच का ही सुख नहीं उठाएँगे, बल्कि इस अंचल में उन लोगों के लिए एक आपेक्षित स्वाधीनता भी कायम रहेगी। फलस्वरूप सेज अंचल में, वे लोग कारोबार के नाम पर मनमानी कर सकते हैं, कोई भी कानून तोड़ सकते हैं। इसके बावजूद, कोई उनका बाल भी बाँका न कर सके, सरकार इसकी कानूनी गांरटी देती है इसलिए सेज सिर्फ देश में विदेश ही नहीं है, सेज निवेशकों के स्वेच्छाचार का आनंद-विहार भी है।

हमें बखूबी याद है, कलकत्ता, गोविंदपुर, सूतानुटी गाँवों की ज मींदारी मुगल बादशाह से बख्शीश में प्राप्त करके, भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना हुई थी। और कुल पचास वर्षों के अंदर-अंदर वे लोग इस देश के मालिक बन बैठे। चीन देश के इतिहास पर नज र डालें तो हमें जानकारी मिलती है कि भारत की तरह समूचा चीन कभी विदेशी साम्राज्यवाद के अधीन नहीं हुआ, हालाँकि चीन का हर प्रमुख वाणिज्य-केंद्र, ब्रिटिश-फ्रेंच-डच समेत विभिन्न साम्राज्यवादियों के नियंत्रण में था। वहाँ चीन के कानून अचल थे। साम्राज्यवादियों का आदेश-निर्देश ही ब्रह्म-वाक्य था। उनका प्रभाव इस हद तक सुदूरप्रसारी था कि ब्रिटिश-शक्ति की लीज समाप्त होने के बाद, महाशक्तिशाली चीन को हांगकांग द्वीप वापस मिल गया। इसके बावजूद वहाँ पुरानी प्रशासनिक और अर्थनैतिक पद्धति ही हू-ब-हू बहाल रखना पड़ी। आज भारत भी क्या उसी नई राह पर कदम बढ़ाना चाहता है?

सवाल उठाया जा सकता है कि यह सब कहना क्या अतिशयोक्ति नहीं है? हमारा विनीत उत्तर है नहीं। भविष्य में क्या हो सकता है, इसके पूर्वाभास के लिए

अतीत के घटना-प्रवाह के आधार पर, वर्तमान के रुझान को समझा जा सकता है। हालाँकि सामाजिक जीवन की रफ्तार हमेशा एक जैसी कायम नहीं रहती, विभिन्न खींचतान के साथ, अकसर अजीबोगरीब, आड़ी-तिरछी राहों से होकर आगे बढ़ती है, लेकिन इसी ढंग से उसके आगामी प्रवाह के बारे में अंदाज ा लगाया जा सकता है। सेज कानून की धारा 3 (1) में कहा गया है कि हर व्यक्ति को सेज गठन का अधिकार है। वैसे यहाँ व्यक्ति का मतलब है, कानूनबद्ध कंपनी भी! उस व्यक्ति को भारतीय होना होगा, इस बारे में कुछ भी स्पष्ट नहीं किया गया है कि विधि संख्या 5 (4) में सिर्फ इतना ही कहा गया है कि सेज निर्माणकारी संस्था में निर्माता या सहनिर्माता का कम-से-कम 26 प्रतिशत शेयर होना ज रूरी है। इस विधि में निर्माता के तौर पर लाइसेंस पाने के लिए, आवदेन-पत्र का जो प्रारूप दिया गया है, उसमें सिर्फ आवेदक संस्था में विदेशी निवेश, अनावासी भारतीय निवेश और आवासीय भारतीय निवेश की राशि की घोषणा करने को कहा गया है।

फिलहाल यह मान लिया जाए कि निर्माता के तौर पर अगर आवेदक कोई भारतीय संस्था हुई, तो वर्तमान नियम मुताबिक विधिबद्ध क्षेत्र में उस आवेदक की मूल पूँजी का 26 प्रतिशत अनिवार्य रूप से आवासीय भारतीय स्रोत से होना चाहिए। इसका निर्माता अगर कोई स्वतंत्र कंपनी तैयार करके, उसके माध्यम से सेज निर्माण करना चाहे, तो उस स्वतंत्र कंपनी में निर्माता का हिस्सा 26 प्रतिशत होगा। यानी वस्तुस्थिति क्या है? निर्माता अगर कानूनी क्षेत्र की कंपनी है, तो सेज की निर्माता स्वतंत्र कंपनी में भारतीय निवेश कितना होगा? जवाब है 26 प्रतिशत का 26 प्रतिशत यानी 6.76 प्रतिशत। कुल मिलाकर 25 हज ार करोड़ रुपए कुल निवेश मान लिया जाए, तो विधिबद्ध क्षेत्र में भी भारतीय निवेश कुल 1690 करोड़ रुपए होंगे गैर-विधिबद्ध क्षेत्र में यानी जहाँ 100 प्रतिशत विदेशी निवेश की मंजूरी हो, वहाँ तो यह रकम शून्य भी हो सकती है। उत्पादक संस्था के मामले में उसके मूलधन के गठन के लिए विधि-कानून के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है। यानी यह समझ लेना चाहिए कि इस मामले में 100 प्रतिशत विदेशी निवेश में कोई एतराज नहीं होगा।

> पश्चिम बंगाल सरकार ने सिंगुर में.... 140 करोड़ मुआवजा देकर ज मीन पर कब्ज ा किया, लेकिन टाटा को कुल 20 करोड़ रुपयों में ही सौंप दिया। वह भी पाँच वर्षों के हिसाब-किताब से दिया है।

तालिका-1
विदेशी निवेश प्रवाह
(करोड़ डॉलर में)

वर्ष	प्रत्यक्ष निवेश	पोर्टफोलियो निवेश	कुल
1990-91	9.1	0.6	10.3
1991-92	12.9	0.4	13.3
1992-93	31.5	24.4	55.9
1993-94	58.6	356.7	415.3
1994-95	131.4	382.4	513.8
1995-96	214.4	274.8	489.2
1996-97	282.1	331.2	613.3
1997-98	355.7	182.8	538.5
1998-99	246.2	(-) 6.1	240.1
1999-00	160.8	184.0	344.8

अ.ई.सा., 1998-2000 पृष्ठ 72

तो फिर भारत में शुल्क सीमा से बाहर (हालाँकि भारत के नक्शे के अंदर) विभिन्न टैक्स और शुल्क तथा छूट, साथ ही कानून की सख्ती की परवाह न करने के परिवेश में मूल निवेश कहाँ से होगा? कानून और विधि के बारे में, जो विचार इस अध्याय में किया गया, उससे यह बात साफ है कि दिशा में लक्ष्य है अनिवार्य विदेशी पूँजी। तो फिर सन् 1949 से पूर्व के चीन से यह फर्क कहाँ है? रॉबर्ट क्लाइव के बंगाल से यह कहाँ अलग है? हाँ, एक फर्क अनिवार्य रूप से मौजूद है। इस मामले में प्रत्यक्ष राजनैतिक नियंत्रण, कभी भी विदेशी निवेशक के हाथ में नहीं होगा। लेकिन हमें एक और बात भी याद रखनी चाहिए कि दूसरे विश्वयुद्ध खासकर वियतनाम के मुक्तियुद्ध के बाद, आर्थिक नियंत्रण के ज रिये ही अगर मुनाफा लूटना आसान हो, तो साम्राज्यवादी ताकतें, प्रत्यक्ष राजनैतिक नियंत्रण का झमेला नहीं लेंगी। सेज के विधि कानून की विभिन्न धाराएँ कहती हैं कि अगर विदेशी निवेशकों के अधिकार सुरक्षित रहें, तो बाहर से नियंत्रण लादने की क्या ज रूरत है?

सेज के प्रशासनिक ढाँचे के बारे में बस यहीं रुकें! आइए, हम इससे जुड़े अन्यान्य विषयों पर विचार करें।

छूट का महोत्सव

जेआ कानून की विभिन्न धाराओं और विधियों में सेज निर्माता और उत्पादन संस्थाओं के लिए तरह-तरह के टैक्स और शुल्कों में छूट की बात कही गई है। इन विभिन्न छूटों का परिमाण ठीक-ठाक समझने के लिए, इस किस्म की विभिन्न छूटों को मिलाकर देखा जाए।

1. ज मीन की खरीद-फरोख्त या लीज देने पर स्टाम्प ड्यूटी में।
2. विभिन्न स्थानीय करों में छूट।
3. जेआ अंचलों में बिजली की खरीद या उत्पादन पर महसूल और कर में छूट।
4. आमदनी शुल्क छूट।
5. निर्यात पर कस्टम ड्यूटी में रिहाई।
6. भारत के अन्यान्य क्षेत्रों से सामग्री और सेवा की खरीद पर उत्पादन शुल्क में छूट।
7. सेवा टैक्स छूट।
8. अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक सेवा केंद्र के माध्यम से शेयर की लेन-देन पर सिक्योरिटी टैक्स में छूट।
9. भारत के अन्यान्य हिस्सों से सामानों की खरीद पर विक्रय-कर छूट।
10. निर्माता द्वारा प्रदत्त डिविडेंड (लाभांश) पर बंटित मुनाफा-कर में छूट।
11. विदेशी लीजिं ग कंपनी से मूलधन द्रव्यों की लीज लेने के कर में छूट।
12. जेआ अंचल में सामानों के प्रवेश और निर्गमन पर कोई निगरानी नहीं रहेगी।

साथ ही आइए, अब आयकर छूट पर नजर डालें

1. जेआ के निर्माताओं के मामले में शुरू के 15 वर्षों में से, अपनी मर्जी-मुताबिक किसी भी दस वर्ष, सेज से प्राप्त आय, आयकर के दायरे से बाहर रहेगी।
2. सेज की किसी भी संस्था में पहले पाँच वर्षों की निर्यात से हुई आय, आयकर के दायरे से बाहर रहेगी। उसके बाद पाँच वर्ष में, निर्यात से प्राप्त आय के आधे हिस्से पर, यह सुविधा उपलब्ध होगी।
3. जेआ में स्थित ऑफ-शोर बैंकों में अनावासी द्वारा संचय पर प्राप्त ब्याज पर आयकर नहीं लगेगा।
4. जेआ के अंतर्गत किसी भी नुकसान को क्रमिक रूप से पुंजीभूत किया जा सकेगा और बाद में जब किसी वर्ष लाभ होगा, उसके साथ बराबर किया जा सकेगा।

5. ऑफ-शोर बैंक की आय, पहले पाँच वर्ष तक पूरी तरह आयकर के दायरे से बाहर रहेगी। बाद के पाँच वर्षों में यह राशि होगी, आय का पचास प्रतिशत।

यह तो हुई सेज के निर्माता और उत्पादक संस्थाओं द्वारा प्राप्त छूट की मात्रा। ये सुविधाएँ सेज निर्माताओं को प्रक्रियाकरण और अ-प्रक्रियाकरण, दोनों ही अंचलों में उपलब्ध होंगी। यानी उद्योग-संस्था के साथ-साथ आवास, पार्क, होटल और सिनेमा, थिएटर निर्माण में भी ये सुविधाएँ प्राप्त होंगी। आइए, अब यह देखें कि निर्माता या सेज संस्था, भारत के अन्यान्य अंचलों से सामान खरीदेंगी, वे लोग इससे क्या-क्या सुविधाएँ प्राप्त करेंगे।

1. संबद्ध विक्रय पर उत्पादन शुल्क लागू नहीं होगा। लेकिन विक्रेता संस्था ने खुद जब खरीदा, उस वक्त जो उत्पादन शुल्क चुकाया था, उससे सेट-ऑफ लेने की उसे सुविधा होगी।
2. विक्रय-कर (VAT) के मामले में भी यह सुविधा उपलब्ध होगी।
3. जेम में कोई सेवा प्रदान की गई, उस पर सेवा-कर नहीं लगेगा।

इसके अलावा, सेज की संस्थाएँ, सेज के बाहर की किसी भी संस्था को उत्पादन प्रक्रिया का कोई भी हिस्सा ठेके पर दे सकती हैं। इस मामले में भी ये सारी सुविधाएँ लागू होंगी। आइए, अब इस पर विचार करें कि भारतीय अर्थनीति में इन सभी छूटों का क्या मतलब हो सकता है।

राजस्व छूट या राजस्व लूट

कर के ढाँचे में शामिल है, प्रत्यक्ष कर और अप्रत्यक्ष कर इन सभी करों को दो हिस्सों में बाँटा जा सकता है। आयकर की तरह, प्रत्यक्ष कर के मामले में, जो छूट दी जाएगी, उसका प्रभाव या प्रकोप, सिर्फ उपरोक्त चर्चित संस्थाओं पर ही पड़ेगा। यानी जिन संस्थाओं को आयकर में छूट होगी सिर्फ उन्हें ही इसका भी सुफल मिलेगा। जबकि सामग्रिक रूप से उद्योग और निर्यात की वृद्धि का कोई भी सुफल, आयकर दफ्तर को नहीं मिलेगा। यही बात सेवा-कर, स्टाम्प ड्यूटी वगैरह के मामले में भी लागू होती है। लेकिन अप्रत्यक्ष कर, मसलन उत्पादन शुल्क, विक्रय कर वगैरह के मामले में, यह और जटिल है क्योंकि इस मामले में सिर्फ कर-छूट का ही सवाल नहीं है, साथ ही अतीत में प्रदत्त शुल्क प्रत्यार्पण (Draw back or set off) का विषय भी जुड़ा हुआ है। एक उदाहरण समेत इस विषय की चर्चा की जाए।

फर्ज करें सेज की कोई संस्था, भारत के अन्य किसी हिस्से में स्थित किसी कंपनी से, किसी साल, एक करोड़ रुपयों का सामान खरीदती है। अंकों की सुविधा के लिए,

अगर यह फर्ज करें कि उत्पादन शुल्क की दर 10 प्रतिशत है। इस मामले में विक्रेता कंपनी, इस विक्रय पर 10 लाख रुपए शुल्क नहीं लगाएगी। लेकिन, उस कंपनी को, यह सामान प्रदान करने के लिए देसी बाज ार से उसे सामान खरीदना ही होगा और उस पर उत्पादन शुल्क भी देना होगा। अब, फज ि करें उक्त सामान के लिए, इस कंपनी ने 50 लाख रुपयों के कच्चे माल पर 5 लाख रुपए उत्पादन शुल्क दिए। अगर इस कंपनी ने अपने सामान, सेज संस्था के बजाय, अन्य किसी संस्था को बेचे होते, तो वह सरकारी खजाने में कर देते हुए लाख रुपयों में से 5 लाख रुपए निकालकर, बाकी 5 लाख जमा कर देती। लेकिन चूँकि बिना किसी उत्पादन शुल्क के ही, सारा सामान, सेज संस्था को बेचा गया है, इसलिए कच्चा माल खरीदते समय प्रदत्त उसके पाँच लाख रुपए उसके द्वारा इस्तेमाल नहीं किए गए यानी यूँ ही रह गए। ये रुपए उसकी कंपनी, भारत में अन्यत्र विक्रय पर लागू उत्पादन शुल्क, उस राशि से बाद में दे सकती है। यानी, उत्पादन शुल्क में छूट की राशि हो गई 15 लाख रुपए।

> वित्त-कार्यालय को आशंका है कि सन् 2009-10 में राजस्वक्षति की राशि एक करोड़ रुपए हो जाएगी। इसमें प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कर की बावत 57,000 करोड़ रुपयों का नुकसान होगा और बाकी कस्टम्स और एक्साइज शुल्क पर (फ्रंट लाइन, 20 अक्टूबर, 2006)

विक्रय-कर के मामले में भी यही स्रोत लागू होता है। लेकिन विक्रय-कर मूल्य के साथ उत्पादन शुल्क जोड़कर जो भी कीमत निर्धारित की जाती है, उस पर विक्रय-कर लागू किया जाता है। लगभग सभी औद्योगिक कच्चे माल पर विक्रय-कर का दर 4 प्रतिशत लागू किया जाता है। इस हिसाब से सेज संस्था को आलोच्य समानों की खरीद पर विक्रय-कर 4.40 लाख रुपए की छूट होगी, और जिस संस्था द्वारा यह विक्रय-कर लागू किया जायेगा, उसके विक्रय-कर, सेट-ऑफ की राशि होगी 2.20 लाख रुपये। यानी कुल विक्रय-कर छूट होगी, 6.60 लाख रुपए। उत्पादन शुल्क और विक्रय-कर मिलाकर, वह राशि होगी 21 लाख 60 हज ार रुपए। उत्पादन शुल्क का मौजूदा दर यानी 16 प्रतिशत लगाया जाए, तो छूट की असली राशि होगी 31 लाख 74 हजार रुपए। इसका मतलब यह हुआ कि सेज संस्था अगर देशी बाज ार से सामान खरीदे, तो अप्रत्यक्ष-कर की बावत, सामान के मूल्य का प्रायः 32 प्रतिशत राजस्व छूट प्राप्त होगी। 21.16 प्रतिशत सीधी छूट और 10.58 प्रतिशत सेट-ऑफ के ज रिये प्रत्यक्ष राजस्व में घाटा। बिल्कुल यही कारण है कि केंद्रीय वित्तमंत्री, पी. चिदम्बरम नेसेज संस्थाओं को बेभाव कर-छूट का विरोध करते हुए कहा है कि इसके

फलस्वरूप सरकार को लगभग एक लाख करोड़ रुपयों की राजस्व-हानि होगी। सबसे बड़ी बात यह है कि सेज में सामानों के प्रवेश या निकासी पर कोई निगरानी नहीं रखी जाती। यह बात कानून में साफ-साफ कह दी गई है, इसके फलस्वरूप अप्रत्यक्ष-कर में किसी नए किस्म की धोखाधड़ी का कारोबार शुरू हो जाएगा। जिस सामान की भारत में अन्यत्र बिक्री हो चुकी है, असल में वह सेज संस्था की ही खरीद है, ऐसा कहा गया है, इसलिए सेज संस्था खुद ही सर्टिफिकेट जारी कर देगी, जो कानूनन ग्रहण योग्य है। इस तरह टैक्स की सभी तरफ से ही चोरी शुरू हो जाएगी।

राजस्व हानि और सामाजिक दायित्व

राजस्व हानि का अर्थ है, केंद्र और राज्य सरकार का उपार्जन कम हो जाना। केंद्र और राज्य सरकार जो अर्जित करती हैं, उसका एक हिस्सा खर्च करके अपना सामाजिक दायित्व निभाती हैं यानी राशनिंग व्यवस्था हो या सरकारी चिकित्सा व्यवस्था उस पर होने वाले ख़र्च को सरकार राजस्व वसूली के ही एक हिस्से के दम पर वहन करती है। यूँ भी केंद्र और राज्य सरकार का जो अनाप-शनाप खर्च है राजस्व वसूली की राशि उसके लिए पूरी नहीं पड़ती। नतीजा यह होता है कि देश के अन्दर और बाहर से सरकार को कज ेलेना पड़ता है। और कर्ज लगातार लेना पड़ता है। राजस्व और कज ेमिलाकर, सरकार को जो कुल आय होती है, उसका कुल 15 प्रतिशत स्वास्थ्य-शिक्षा-गरीबी-गण-बंटन-ईंधन वगैरह सामाजिक कार्यों पर खर्च किया जाता है। अब, अगर राजस्व में घाटा होता है, तो इसकी प्रतिक्रिया दो किस्म की होती है। या तो सीधे-सीधे सामाजिक खाते में खर्च के लिए जो राशि अनुमोदित की गई है, उसमें छँटनी होगी या कज ेका बोझा बढ़ाते हुए, वर्तमान अनुमोदित राशि को थामे रखने की कोशिश की जाएगी। इसका नतीजा यह होगा कि उस सामाजिक कार्य के खाते में खर्च का परिमाण, निश्चित रूप से कम हो जाएगा। केंद्रीय वित्तमंत्री के वक्तव्य ने, इसी आशंका को ही अधिक मज बूत किया है।

श्री पी. चिदम्बरम की आशंका के विपरीत वाणिज्य मंत्री कमलनाथ (जो आजकल सेज योजना के मूल पुरोहित हैं) का कहना है कि सेज को अगर वास्तविक रूप प्रदान किया गया, तो शुरू के दस वर्षों में जो राजस्व हानि होगी, बाद के वर्षों में उससे कई गुना ज यादा राजस्व वसूल होगा। इसलिए कभी-न-कभी यह घाटा पूरा हो जाएगा। कमलनाथ का यह वक्तव्य आंशिक सत्य पर आधारित है। हम पहले ही देख चुके हैं कि सिर्फ आयकर के क्षेत्र में ही छूट का सवाल दस वर्षों तक सीमित है। लेकिन अन्यान्य विविध कर और शुल्क के मामले में, जिन विविध छूट की घोषणा

की गई है उसकी कोई समय-सीमा नहीं है। यानी जितने दिनों तक जेस कायम रहेगा, उतने दिनों तक वह इस किस्म के विविध करों और शुल्कों के प्रकोप से मुक्त रहेगा। फलस्वरूप किसी एक समय राजस्व में वृद्धि होगी और राजस्व-हानि के क्रमपुंजित प्रभाव की उस वजह से भरपाई हो जाएगी यह आशा महज दुराशा है।

फ र्ज करें, किसी सेज संस्था को भारतीय मुद्रा में कुल निर्यात मूल्य का 10 प्रतिशत, विशुद्ध मुनाफा होगा। ऐसे में, उसके बाद मौजूदा दर से जो आयकर लागू होगा, वह रकम निर्यात मूल्य का 2.4 प्रतिशत होगा। यानी अगर एक करोड़ रुपयों का निर्यात किया गया, तो उस पर आयकर होगा 2.4 लाख रुपए। हम यह पहले ही देख चुके हैं कि सेज संस्था देशी बाज ार से, जो सामान खरीदेगी उस पर उत्पादन शुल्क और विक्रय-कर सेट-ऑफ बावत राजस्व-हानि होगी 10.58 प्रतिशत यानी विशुद्ध घाटा 8.18 प्रतिशत, फिर भी बच रहेगा।

आजकल ऐसी असंख्य भारतीय संस्थाएँ हैं, जिन्हें सेज में घोषित सारी सुयोग-सुविधाएँ प्राप्त नहीं हैं। फलस्वरूप निर्यात करने के क्षेत्र में वे लोग सेज संस्था से मुकाबला नहीं कर पाएँगे। या तो वे सब संस्थाएँ बंद हो जाएँगी या सेज की सुविधाएँ लेने के लिए वे लोग अपने वर्तमान कारखाने बंद करके, पूरी की पूरी यूनिट सेज से हटा ले जाएँगे। इस बीच आय कर कानून की 54 जी ए धारा में कहा गया है कि इस मामले में मूलधन पर कोई मुनाफा-कर प्रयुक्त नहीं होगा। यानी इस रुझान के फलस्वरूप राजस्व-हानि और बढ़ेगी।

कुल मिलाकर स्थिति यह है कि सेज स्थापन के फलस्वरूप निवेश होगा, उद्योग होगा और निर्यात में वृद्धि होगी। लेकिन सरकारी खजाने में राजस्व-हानि होगी, जिसके फलस्वरूप सामाजिक खाते में खर्च के लिए अनुमोदित राशि कम हो जाएगी। यानी बहुजातीय संस्थाओं का मुनाफा तो सुरक्षित रहेगा और औद्योगीकरण का मूल्य चुकाएँगे, अभागे द्ररिद भारतवासी, धन्य है ऐसी तरक्की!

सेज : कार्पोरेट प्रमोटरी राज

जेस कानून में सेज को प्रक्रियाकरण और अप्रक्रियाकरण अंचल इन दो अंचलों में विभाजित किया गया है। प्रक्रियाकरण अंचल का मतलब है वह अंचल, जहाँ उत्पादन संस्था यानी कारखाने स्थित हैं और जिस हिस्से में कारखाने नहीं होंगे वह होगा अप्रक्रियाकरण अंचल। इस अप्रक्रियाकरण अंचल में क्या स्थित होगा? विधि संख्या 11 (10) में कहा गया है कि वहाँ वाणिज्यिक और सामाजिक संरचना तैयार की जाएगी। इस जटिल शब्द का बोधगम्य अर्थ भी बता दिया गया है। बाद में

केंद्रीय मंत्रिमंडल कमिटी ने इस सीमा को बढ़ाकर 50% करने की सिफारिश की है। हालाँकि विधि में इस प्रकार का कोई संशोधन अभी तक नहीं किया गया, फिर भी, हम इसके आधार पर ही एक नज र डाल लें। इस कमिटी ने और भी एक सिफारिश की है कि एकाधिक सामानों के उत्पादन के लिए सेज का विस्तार 5000 हेक्टेयर जमीन से अधिक नहीं होगा। उसमें से 2500 हेक्टेयर जमीन कारखाना बनाने के लिए रखी जाएगी और बाकी 2500 हेक्टेयर सामाजिक और वाणिज्यिक ढाँचे के लिए होगी।

फर्ज करें 2500 हेक्टेयर ज मीन में से 500 हेक्टेयर सड़क, अस्पताल, स्कूल, कॉलेज, मैदान-पार्क वगैरह बनाने में उपयोग की जाएगी, तो बाकी 2000 बीघा ज मीन का मतलब है, 3 लाख कट्ठा ज मीन। अगर औसत रूप से हर 20 कट्ठे ज मीन पर एक-एक बहुमंजिल मकान बनाया जाए तो 30,000 मकान तैयार हो जाएँगे। हर मकान में अगर चार फ्लैट, पाँच-मंजिला-विशिष्ट हो, तो कुल 6 लाख फ्लैट तैयार हो जाएँगे। इन 6 लाख फ्लैटों का क्या होगा? सेज संस्थाएँ अगर क्वार्टर के तौर पर मामूली-सा हिस्सा भी इस्तेमाल करें, तो इसका मुख्य भाग आवास के तौर पर बेचा जाएगा। यानी कारखाना चाहे जैसा भी हो, सेज निर्माता ठाठ से प्रमोटरी करने को बंदोबस्त कर लेंगे और वह प्रमोटरी भी किसी कि स्म के कर या शुल्क के बिना ही की जा सकेगी।

आजकल के ज माने में उच्च-तकनीक-निर्भर कारखाना बनाने के लिए प्रचुर निवेश की ज रूरत पड़ेगी और उत्पादन शुरू हो जाने के बाद भी निवेश किए गए अर्थ को मुनाफे के ज रिये वसूल करने में काफी सारे वर्ष लग जाएँगे। वैसे निवेश का एक बड़ा हिस्सा, कंपनी की निजी पूँजी नहीं है, बल्कि अर्थनैतिक प्रतिष्ठानों से ब्याज पर लिया गया कर्ज है। यानी निजी निवेश की वसूली के साथ-साथ, ब्याज समेत यह कर्ज भी अदा करना है। लेकिन प्रमोटिंग-व्यवसाय, ऐसा व्यवसाय है, जहाँ निवेश, बहुत जल्दी वसूल कर लिया जाता है। इसके अलावा इस व्यवसाय में लाभ-दर भी बहुत ज यादा होता है और संभावित किराएदारों से एडवांस में ली गई राशि से ही, निवेश का बहुत बड़ा हिस्सा अपने हाथ में वापस आ जाता है।

कुल मिलाकर वस्तुस्थिति क्या है? सेज के सामग्रिक निर्माण के लिए, निर्माताओं के लिए निवेश करने का जो झमेला है और इस निवेश से विशुद्ध मुनाफा (यानी कुल मुनाफे से निवेश और सूद असल समेत कर्ज की मात्रा अगर निकाल देने के बाद जो राशि बच रहती है) निकालने में जो लंबा समय लगना चाहिए, उससे बचाव की एकमात्र राह है वह प्रमोटिंग के ज रिये ही पूरा कर लेगा। फलस्वरूप निवेश का

मुख्य-भाग बहुत जल्दी ही उत्पादक निवेश में यानी विशुद्ध मुनाफे में रूपांतरित हो जाएगा। जाहिर है कि उसके झमेले कम होंगे, आर्थिक उत्तरदायित्व भी कम होगा और मुनाफा बढ़ जाएगा। इसके बाद भी अगर कोई संस्था, सेज निर्माण का प्रयास न करना चाहे, तो वह मूर्ख ही कहलाएगा।

विशेष शोषण अंचल

किसी कारखाने में उत्पादन के ज रिये मुनाफा कमाने के लिए, सिर्फ निवेश करने से ही काम नहीं चलता, श्रम के ज रिये भी उत्पादन करना होता है अर्थात् श्रमिक कर्मचारियों के बिना किसी भी कारखाने में उत्पादन नहीं हो सकता। उत्पादन नहीं हुआ तो बिक्री का सवाल ही नहीं उठता, न ही मुनाफे का सवाल उठता है, समूचे हिंदुस्तान में करीब डेढ़ लाख कारखाने मौजूद हैं, उनमें तरह-तरह के निवेश भी होते हैं, इसके बावजूद वहाँ मुनाफे के दर्शन नहीं होते, क्योंकि वहाँ उत्पादन जो बंद होता है। जाहिर है कि श्रम के बिना उत्पादन संभव नहीं है। इस नज रिए से सोचें, तो पता चलेगा कि कारखानों या मुनाफे का असली जनक, श्रम ही है। लेकिन, मिल्कियत के दम पर पूँजीपति ही वह मुनाफा हजम कर जाते हैं।

विभिन्न कच्चे माल या यंत्रों की कीमत की तरह, पूँजीपतियों को श्रमिकों को भी मोल चुकाना पड़ता है, जिसका नाम है मजूरी या तनख्वाह। जाहिर है कि मजूरी और सहायक प्राप्य को लेकर, श्रमिक-मालिक में कोई-न-कोई विरोध रहता ही है। यह अवरोध हमेशा उग्र गति से चलता है, ऐसा भी नहीं है। लेकिन खास-खास वक्त में यह विरोध विस्फोट का रूप ले लेता है और श्रमिक-आंदोलन में परिणत हो जाता है। किसी भी उद्योग की स्थापना के समय ही, भविष्य में कभी भी श्रमिक-असंतोष की घटना हो सकती है, उद्योगपतियों को इसका भी ध्यान रखना पड़ता है। जब बाजार-स्थिति अच्छी हो, मुनाफा-दर खासा ऊँचा हो, तब पूँजीपति मजदूरी और श्रमिक-कल्याण की राशि बढ़ा देते हैं। लेकिन बाज ार जब मंदा हो, मुनाफा-दर में गिरावट हो, तब श्रमिकों की कोई भी माँग ठुकरा दी जाती है और श्रमिक-आंदोलन को सख्त हाथों से कुचल देने की कोशिश की जाती है।

जो गठित हो रहे हैं, ऐसे समय में समूची दुनिया में आर्थिक संकट विद्यमान है। खुद यूरोप-अमेरिका में ही छँटनी में वृद्धि हो रही है, मजदूरी और श्रमिक-कल्याण पर खर्च होने वाली रकम कम होती जा रही है। और-और सुयोग-सुविधा की खोज में बहुजातीय संस्थाएँ, तीसरी दुनिया के अपेक्षाकृत सस्ते श्रम वाले देशों की तरफ दौड़

लगा रही हैं। ऐसी परिस्थिति में सेज का श्रम-परिवेश, तत्त्वतः श्रमिकों के अनुकूल नहीं हो सकता। आइए, देखें, सेज विधि-कानून में इस बारे में क्या कहा गया है?

विधि संख्या 5 (5) में कहा गया है कि सेज गठन की सिफारिश पेश करते समय ही, राज्य सरकार को यह घोषणा करनी पड़ेगी कि सेज एक अत्यावश्यक सेवा क्षेत्र है। सेज निर्माण का आवेदक, किसी अंचल की शिनाख्त करेगा और इसके लिए बोर्ड ऑफ एप्रूवल को आवेदन करेगा। तब तक इस बात की जानकारी नहीं होती कि कौन-कौन से शिल्प-उद्योगी, कारखाना स्थापन के लिए आ सकते हैं या किन-किन सामानों के कारखाने स्थापित किए जा सकते हैं। जिन-जिन सामानों के कारखाने स्थापित होंगे, वे सब जन-जीवन में अत्यावश्यक सेवा के रूप में गिने जाएँगे या नहीं, यह जानने का भी कोई उपाय नहीं है क्योंकि सेज की अधिसूचना (notification) के बाद ही, संस्था के गठन के लिए आवदेन किया जा सकता है। हालाँकि यह सब जानने-समझने के पहले ही प्रस्तावित सेज अंचल को (जो अभी तक गठित भी नहीं हुआ, सिर्फ गठन की प्रक्रिया पर ही जमा पड़ा है) अत्यावश्यक सेवा क्षेत्र होने की स्वीकृति दे दी गई। यह तो वही बात हुई कि राम-जन्म से पहले ही रामायण लिख डाली गयी।

> एक विश्लेषण में यह देखा गया है कि सन् 2003-04 में कुल आठ सेज ने 13,853,56 करोड़ रुपयों को निर्यात के जरिये कमाया, जो देश की कुल निर्यात आय का 0.047 प्रतिशत है। सन् 2005-06 में कुल 11 सेज की निर्यात आय 18,307 करोड़ रुपये थी, जो कुल निर्यात आय का 0.05 प्रतिशत है। इन सेज योजनाओं में प्रायः एक लाख लोगों को रोजगार मिला, दूसरी तरफ लघु उद्योग संस्थाओं द्वारा सीधे-सीधे निर्यात, कुल निर्यात-आय का 35 प्रतिशत है और वहाँ प्रायः 2 करोड़ लोग कार्यरत हैं। सामाजिक सुरक्षा मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट, 2005-06

अत्यावश्यक सेवा क्षेत्र के रूप में स्वीकृति देने की वजह से सेज संस्थाओं को कौन-कौन सी विशेष सुविधाएँ मिलेंगी, आइए, उस पर भी विचार कर लें

1. हड़ताल या काम बंद की घोषणा करना स्थायी तौर पर निषिद्ध हो जाएगा।
2. श्रमिक आंदोलन के अन्यान्य रूप यानी मीटिंग-जुलूस-डेपुटेशन वगैरह सिर्फ टिफिन के अवकाश के समय ही किया जाएगा।
3. संस्थाएँ 24 घंटे उत्पादन कर सकेंगी।
4. श्रम-समय की सर्वोच्च सीमा के मामले में, जरूरत पड़ने पर छूट भी मिलेगी।
5. उत्पादन का सिलसिला जारी रखने के लिए, जरूरत पड़ने पर अधिकारी, छुट्टी और अन्यान्य अधिकार भी खत्म कर सकेंगे।

6. श्रमिक आंदोलन के मामले में बिल्कुल शुरू में ही केंद्र या राज्य सरकार एस्मा या अत्यावश्यक सेवा कायम रखने के कानून का प्रयोग कर सकती हैं।

अर्थात् उत्पादन केंद्र स्थापना का प्रस्ताव देने से पहले ही संभावित निवेशकों को यह पता चल जाता है कि उसे श्रम-समस्या के बारे में फिक्र करने की ज रूरत नहीं होगी। बात यहीं खत्म नहीं होती। इसी विधि मुताबिक डेवलपमेंट कमिश्नर को श्रम-विवाद के मामले में निर्वाही अधिकारी के तौर पर भी क्षमता प्रदान करने की बात कही गई है। हम पहले यह देख चुके हैं कि डेवलपमेंट कमिश्नर की मुख्य जिम्मेदारी है, सेज का गठन और निर्यात-वृद्धि करना। जिनका यही मुख्य दायित्व है कि, उसे ही अगर श्रम-समस्या मिटाने का अधिकार दिया गया, वह किसके हत्थे चढ़ेगा, यह आसानी से समझा जा सकता है। नौकरी का रखवाला अगर पालक के खेत का पहरेदार बन जाए, तो सारा उजाड़ होने में बस, थोड़ा-सा ही वक्त लगेगा।

फर्ज करें, ऐसी ही किसी संस्था में श्रमिक विक्षोभ हुआ। मालिक या श्रमिक, कोई एक पक्ष, श्रम-विवाद कानून के तहत, डेवलपमेंट कमिश्नर की शरण में आ गया। डेवलपमेंट कमिश्नर जानता है कि उसका मुख्य दायित्व, सेज की आर्थिक श्रीवृद्धि और निर्यात-विकास की देखभाल करना है। वह यह भी जानता है कि संबद्ध अंचल, अत्यावश्यक सेवा क्षेत्र के तौर पर घोषित है। ज ाहिर है कि उसका लक्ष्य होगा, चाहे जैसे भी हो, विदेशी मुद्रा अर्जित करने के लिए उत्पादन और निर्यात को निरंतर जारी रखना। फलस्वरूप श्रमिक-मालिक के संघर्ष में उसकी अवस्थिति उत्पादन यानी मालिक के पक्ष में होगी। यूँ भी अत्यावश्यक सेवा क्षेत्र होने की वजह से श्रमिकों को हड़ताल या काम-बंद करने का हक नहीं है। फलस्वरूप शुरू से ही श्रमिकवर्ग अपेक्षाकृत रक्षात्मक स्थिति में रहने को मज बूर होंगे। इस स्थिति में विदेशी मुद्रा अर्जन के बहाने, उन लोगों को और अधिक दबाए रखने की कोशिश की जाएगी। यही स्वाभाविक है। नतीजा यह होगा कि सेज निर्माता और संस्था, अन्यान्य विविध सुयोग-सुविधाओं की तरह ही, श्रम-विवाद की समस्या के मामले में भी अतिरिक्त सुविधा प्राप्त करेंगे। इसलिए सेज को Special Exploitation Zone या विशेष शोषण अंचल कहा जाए, तो शायद अतिशयोक्ति नहीं होगी।

कार्पोरेट ज मींदारी

'जमींदार' शब्द से कमोबेश हम सभी परिचित हैं। हम सब जमींदारी के प्रताप की विभिन्न कथा-कहानियों से भी परिचित हैं। देश को सालाना टैक्स देने के बदले में जमींदार वर्ग एक-एक भूखंड के प्रायः स्वतंत्र मालिक हुआ करते थे। जमींदारों को

अपनी मर्जी-मुताबिक बँटवारे-बंदोबस्त करने का यानी विभिन्न लोगों को बख्शीश या लीज देने का अधिकार हुआ करता था। बख्शीश लेने वाले लोग आमतौर पर रैयत या प्रजा माने जाते थे। जब नेहरू देश के प्रधानमंत्री थे, तब उन्हीं के ज माने में पहले देशी राज्य प्रथा और बाद में जमींदारी प्रथा खत्म करने का कानून पास हुआ। जमींदारों की प्रजा को भारत देश का नागरिक होने का सम्मान मिला।

जेअ कानून का अगर गहराई से अध्ययन करें, तो यह बात साफ-साफ समझ में आ जाएगी कि कोई भी निर्माता, पहले जमीन की पहचान करेगा और उसकी मिल्कियत हासिल करेगा। उसके बाद, उसी ज मीन पर वह सेज उपयोगी ढाँचा तैयार करेगा और बाद में विभिन्न उद्योगों को ज मीन, लीज पर देगा। हालाँकि कानून में किसी अनुमोदन कमिटी की बात कही गई है, लेकिन यह बात साफ ज ाहिर है कि किसीसेज निर्माण में जो निवेश करता है, उसी की बात आखिरी बात होगी, जिससे उसे सर्वाधिक मूल्य मिलेगा, आखिर में लीज उसी को मिलेगा। यानी भारतीय भूखंड के एक-एक हिस्से में कौन उद्योगपति किस किस्म का कारखाना लगा सकता है, इस बारे में केन्द्रीय या राज्य सरकार को और कुछ कहने की ज रूरत नहीं पड़ी। विभिन्न फैसले लेने का अधिकार, अनुमोदन कमिटी की बकलम सेज निर्माता के हाथ में चला जाता है। पुराने जमींदार कोई एक व्यक्ति या परिवार हुआ करता था और वर्तमान युग में सेज जमींदार वर्ग, एक-एक कार्पोरेट संस्था होंगे। इसलिए सेज व्यवस्था ने चिरस्थायी बंदोबस्त-स्रष्ट जमींदारी के बजाय एक कार्पोरेट जमींदारी व्यवस्था को जन्म दिया है।

कोई-कोई यह कह सकता है कि सेज योजना के दोष गिनाते-गिनाते आलोचक हद से आगे बढ़ गये हैं। सेज कानून में निर्माता पर असंख्य-निषेध विधि आरोपित किया गया है। यहाँ तक कि ज रूरत पड़ने पर, निर्माता को प्रदत्त लाइसेंस वापस लेकर किसी अन्य संस्था को, सेज निर्माण का लाइसेंस देने की बात कही गई है। इसके बाद भी जमींदारी व्यवस्था से इसकी तुलना कैसे की जा सकती है? ठीक ही तो इसमें जाने कितने अजस्र विधि-निषेध जारी किए गए हैं। हम सब इनकी समीक्षा करते हुए, यह जान चुके हैं कि सारे के सारे सेज , निर्माता और संस्था का भंडार भरने में ही मदद करेंगे। रहा लाइसेंस वापस लेने का सवाल। कानून में यह स्पष्ट कहा गया है कि निर्माता अगर निर्धारित समय के अंदर, निर्माण-कार्य पूरा करने में असफल हों या ऐसी कोई संभावना हो या आर्थिक समस्या आ पड़े, एकमात्र तभी लाइसेंस रद्द किया जा जाएगा। और यह भी निर्माता के आवदेन के आधार पर या उसके अनुमोदन-सापेक्ष आधार पर रद्द किया जाएगा।

ब्रिटिश ज माने में भी खज ाना बकाया पड़ जाता था, तो जमींदारी नीलाम हो जाती थी, किसी-किसी मामले में जमींदार को जेल भी काटना पड़ता था लेकिन इस वजह से जमींदारी व्यवस्था क्या मिट गई थी। नहीं, ऐसा नहीं हुआ। इसलिए लाइसेंस छीन लेने की बात कही जाने के बावजूद क्या जमींदारी क्षमता नष्ट हो जाती? जमींदारी व्यवस्था का मतलब लठैत, मुर्गियों की लड़ाई या बाई जी का नाच ही नहीं था, बल्कि इसकी मुख्य बात थी, विस्तृत भूखंड पर रैयतों को बख्शीश और ज मीन देने का अधिकार सेज कानून में अनुमोदन कमिटी के मुताबिक निर्माता को कोई भी ज मीन किसी भी योग्य उद्योगपति को लीज पर देने का हक है। ढाँचा तैयार करने के लिए, रुपए जब निर्माता ही लगाता है, तब वह अपना प्राप्य भी समझ लेगा। अनुमोदन कमिटी के बाकी सदस्यगण, यहाँ तक कि डेवलपमेंट कमिश्नर भी, यह सार-सच्चाई बखूबी समझते हैं, यह बात इतने सालों के गणतांत्रिक अभ्यास के सहारे, हम भी बखूबी समझ चुके हैं।

इसके बावजूद, यह सवाल उठ सकता है कि जमींदारों के ज मीन देने के अधिकार के साथ सेज की तुलना, अप्रासंगिक है। जमींदारों को टैक्स लगाने का हक था, सेज निर्माता को वह हक नहीं है, इसलिए यह तुलना निरर्थक है। इस मामले में यह कहा जा सकता है कि जमींदारों को कर थोपने का कोई कानूनी अधिकार नहीं था। वे लोग तो सिर्फ खजाना यानी ज मीन का किराया वसूल करने के ही अधिकारी थे। उस वसूली से नवाबी का काम नहीं चलता था। इसलिए वे लोग गैर-कानूनी तरीके से तरह-तरह के टैक्स लाद देते थे। सेज के मामले में कानून मानते हुए ही अनाप-शनाप मुनाफे का इंतजाम कर दिया गया है। इसलिए गैर-कानूनी टैक्स लादने की आखिर क्या ज रूरत है।

रोजगार अपार बेरोजगारी तैयार

जैसा कानून में, सेज गठन के समय जिन सब बातों का ख़याल रखने को कहा गया है, उनमें अन्यतम है, ज यादा से ज यादा नौकरी का सृजन। यह सच है कि किसी भी निर्माण कार्य या उद्योग-स्थापन से रोजगार की सृष्टि होती है। निर्माण-स्थल या उद्योग में, जहाँ-जहाँ सीधे-सीधे प्रत्यक्ष रोजगार मिलता है उसी के साथ उसकी पूर्व पृष्ठभूमि या अनुकरण के क्षेत्र में भी रोजगार के पर्याप्त मौके मिलते हैं। फलस्वरूप जहाँ सेज की स्थापना होती है या वहाँ विभिन्न कारखाने खुलते हैं, काफी सारे रोज गार के मौके भी जरूर होते हैं। जो लोग सेज के प्रबल समर्थक हैं यहाँ तक कि आज समूचे देश में उद्योग-स्थापन की बड़ी-बड़ी कोशिशें की जा रही हैं। उनके समर्थकों

ने भी इस बात की जोर-शोर से घोषणा की है। सेज या उद्योग के फलस्वरूप नए-नए रोज गारों की सृष्टि होगी, बेरोजगारी कम होगी अब इससे बड़ा सपना या महान सान्त्वना और क्या हो सकती है।

यह बात, कहते-सुनते हुए तो भली लगती है लेकिन यह सिक्के का सिर्फ एक पहलू है, जहाँ सारा कुछ सुखद ही सुखद है। लेकिन इसके विपरीत, सिक्के के दूसरे पहलू में घोर हताशा ही हताशा है, इसे नज रअन्दाज करने से भला कैसे चलेगा? सेज कानून में कहा गया है कि सेज की ज मीन अविभाजित और अखंड होगी। उस ज मीन के बीच कोई दूसरी ज मीन या आम सड़क न हो। हालाँकि सेज कानून में ज मीन की ऊर्ध्वसीमा के बारे में नहीं कहा गया है, फिर भी केंद्रीय मंत्रिमंडल की भारप्राप्त कमिटी ने सिफारिश की है कि एकाधिक सामग्री उत्पादक सेज की सर्वोच्च सीमा होगी 5000 हेक्टेयर। आइए, हम इस सिफारिश के संदर्भ में ही अपनी बात शुरू करें।

5000 हेक्टेयर ज मीन का अर्थ है, साढ़े सैंतीस हजार बीघा जमीन। इतनी लंबी-चौड़ी खाली ज मीन पाने के लिए हमें किसी मरुभूमि या पर्वतीय अंचल में जाना होगा। लेकिन इन स्थानों में उद्योग-स्थापन में पानी, सड़क, वगैरह की असुविधा है। वैसे इन सभी ज रूरतों को पूरा करने का बंदोबस्त किया जा सकता है, लेकिन आवास के लिए फ्लैट-बिक्री करने के लिए ग्राहक कहाँ मिलेंगे? वन-जंगलों की भूमि के संदर्भ में भी यही समस्या होगी। बच रही समतल या उपकूल अंचलों की ज मीन। लेकिन इतनी सारी खाली ज मीन पाना असंभव है, तो फिर सेज आखिर कहाँ गठित होगा? एकमात्र उत्तर के ग्रामांचल में।

> हिसाब करें, तो पता चलता है, सन् 1991 से सन् 2001 के मध्य 3.30 करोड़ खेती-जमीन खोकर, भूमिहीन दिहाड़ी श्रमिकों में परिणत हो गए। अ.ई.सा., 2005-06

ग्रामांचल में पाँच क्यों पाँच हजार हेक्टेयर ज मीन भी उपलब्ध हो जाएगी। लेकिन वे ज मीन खाली नहीं होती। जिस तरफ भी हाथ बढ़ाएँगे, वहीं जन-बस्तियाँ, स्कूल, अस्पताल, श्मशान, कब्रिस्तान और अनिवार्य रूप से खेती की ज मीन मौजूद होगी, उसमें से एक बहुत बड़ा हिस्सा निश्चित रूप से उर्वर खेत होंगे। अगर पाँच हज ार हेक्टेयर यानी साढ़े सैंतीस हजार बीघा ज मीन में से ढाई हजार बीघा ज मीन अगर खेत से बाहर की ज मीन मान ली जाए, तो खेती-योग्य ज मीन बच रहती है, पैंतीस हज ार बीघा। अगर हर परिवार के लिए औसत कृषि-जमीन एक बीघा मान ली जाए (समूचे हिंदुस्तान में यह हिसाब कुछ बढ़ा-चढ़ाकर माना गया है), तो पैंतीस हज ार परिवार

सीधे-सीधे कृषि जीवी हैं। इसके अलावा साझा खेती करने वाले किसान, खेत-मजदूरों की संख्या जोड़ी जाए तो इनकी तादाद दुगुनी से भी अधिक है।

अब, यह विपुल परिमाण ज मीन अगर सेज या उद्योग के नाम पर दखल कर ली जाए, तो ये समस्त परिवार तत्काल ही जीविकाहीन हो जाएँगे।

हर परिवार में अगर दो व्यक्ति भी कार्य-सक्षम हों, तो लगभग डेढ़ लाख लोग बेरोजगार हो जाएँगे। साथ ही, पशुपालन (जिसके लिए कोई खास बंदोबस्त नहीं किया जाता), मछली व्यवसाय, साग-सब्जी और अनाज व्यवसाय वगैरह जीविकाओं को अगर बटोर लिया जाए, तो यह संख्या लगभग दो लाख हो जाएगी। यानी सेज की ज मीन दखल करने के साथ-साथ यह विपुल-संख्यक लोग बेरोजगार हो जाएँगे। जो की उद्योग-संस्था में कितने लोगों को रोजगार मिलेगा? बीस हज ार? दस हज ार? पचास हज ार? तो किसका पक्ष भारी हुआ? सेज ने रोज गार के मौके निकाले या सदियों पुराने रोज गारों को ध्वंस करके, ग्रामीण अनगिनत जनता को, मृत्यु की खाइयों में धकेल देना होगा।

> हाल ही में जातीय नमूना समीक्षा में (7वाँ राउंड) यह देखा गया कि बेरोजगारों की जनसंख्या है 58 प्रतिशत। आमतौर पर कार्य में नियुक्त लोगों की संख्या गाँवों में 44 प्रतिशत और शहर में 37 प्रतिशत है। अ.ई.सा., 2005-06

इस समस्या का और भी एक पक्ष है। आज के ज माने में, संगठित उद्योग का अर्थ है, अति उच्च-तकनीक पर आधारित उद्योग। प्रचुर पूँजी लगाने के फलस्वरूप इस किस्म का उद्योग गढ़ा गया और उच्च तकनीक की वजह से श्रमिकों की संख्या, पुराने ढाँचे के कारखानों की तुलना में काफी कम होती है। पुराने ढाँचे का तकनीक-संपन्न चटकल, जितने श्रमिकों की नौकरी का सृजन कर सकता है, नवीनतम तकनीक में, कई गुने ज यादा निवेश के बावजूद नौकरी की संभावना दस गुने के एक अंश से भी कम होती है। उच्च-तकनीक के कारण इस किस्म के उद्योग में अदक्ष श्रम के लिए कोई जगह नहीं है। फलस्वरूप यहाँ सिर्फ शहरी उच्च-शिक्षित बेरोजगार लोगों को ही जगह मिलेगी। ये लोग ही रोज गार दफ्तर में अपना नाम दर्ज कराते हैं। गाँवों के खेत-मजूरों की संतानें उस खाते में अपना नाम लिखाने की बात, सोच भी नहीं सकतीं। अस्तु, विपुल संख्यक ग्रामीण जनता जीविकाच्युत रहेगी, इसके बजाय शहरी नौजवानों की बेरोजगारी की शिकायत कम हो जाएगी। इसके बावजूद, जीविकाच्युत लोगों की तुलना में जीविकाप्राप्त लोगों की संख्या काफी कम होगी।

हाँ, जीविकाहीन किसानों का एक हिस्सा निर्माण-कार्य के समय, सामान जुटाने का काम कर सकता है। वैसे यह भी अस्थायी है। कोई-कोई आवास दुकान बाज ार

में दरबान जैसा काम उपलब्ध कर सकते हैं। कृपया, हँसिये मत। सेज और औद्योगीकरण के पक्षधर स्वाधीनवृत्ति जीवी कृषक महिलाओं को घर-गृहस्थी के कामों में, परिचारिका बनाने का विकल्प नौकरी देने का दावा करते हैं। इस तरह अगर हिसाब किया जाए, तो भिखारी-चोर-डकैत-जेबकतरे भी विकल्प कर्मजीवी की तालिका में शामिल होने में, ज यादा वक्त नहीं लगेगा।

औद्योगीकरण का ढोल पीटने वालों को आखिरकार इसी तर्क का आश्रय लेना होगा।

सेज बनाम कृषि

हमेशा से हम सब यही सुनते आए हैं कि भारत कृषि-प्रधान देश है। आजकल कम्प्यूटर और शॉपिंग मॉल की तूती बोल रही है, इसके बावजूद आज भी इस देश के 63 प्रतिशत लोगों की जीविका, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर ही निर्भरशील है। हम यह वास्तविकता पहले ही देख चुके हैं कि सेज या इस किस्म के बृहद् औद्योगीकरण की बात, आजकल अकसर दुहराई जाती है, इस वजह से लाखों-लाखों कृषि जीवी और सहायक-वृत्त-संपन्न इन्सान, जीविका और जन्मजात परिवेश से उजड़ जाएँगे। इन सबका विकल्प रोज गार किस हद तक हो सकता है या हो भी जाए, तो वह किस किस्म का होगा, यह भी हम देख चुके हैं। पीढ़ी-दर-पीढ़ी की पारिवारिक शिक्षा के ज रिये, दक्ष हो उठने वाले किसान अदक्ष दीन-मजूर में परिणत हो जाएँगे। हाँ, इसके विपरीत शहरी उच्च-शिक्षित बेकार नौजवानों के एक हिस्से को नौकरी जरूर मिल जाएगी। लेकिन इस मामले में नैतिकता का एक सवाल अनिवार्य रूप से उठता है। मेरे घर के किसी बेटे की उन्नति के लिए, अगर किसी अन्य किसी को जीवन-जीविका घर-संसार का विसर्जन देना पड़े, तो क्या ऐसी उन्नति की चाह की जा सकती है? आज जो लोग औद्योगीकरण का ढोल पीट-पीटकर यह कहते फिरते हैं कि बेरोजगारी कम करने के लिए इसके अलावा और कोई संभावना नहीं है, उन लोगों ने ही आज से दस वर्ष पहले, केंद्रीय सरकार द्वारा लाई गई स्वेच्छा-अवसर लेने की नीति के खिलाफ आन्दोलन करने की आवाज उठाई थी कि लंबे अर्से तक सरकारी-गैर सरकारी दफ्तरों में या किसी उद्योग में काम करते-करते दक्षता अर्जित किए हुए, किसी व्यक्ति को रातोंरात पेशा बदलने के लिए कहना, सिर्फ अवैज्ञानिक ही नहीं, अनैतिक भी है। सफेदपोश शहरी सज्जनों के मामले में जो सच है, ग्रामीण जनगण के मामले में वही लागू क्यों नहीं हो सकता?

इस समस्या में और एक भयंकर आशंका भी है। भारतीय लोगों का 63 प्रतिशत

कृषि पर निर्भर रहकर, जीवन निर्वाह करता है। इनका एक भी हिस्सा अगर कृषि-ज मीन से उजाड़ दिया जाता है तो कृषिजीवी लोगों की संख्या और कम हो जाएगी और कृषि का क्षेत्र भी कम हो जाएगा। उत्पादन का वर्तमान परिवेश अगर कायम रखा जाए तो यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि सारे सेज और अन्यान्य बृहद् उद्योग-स्थापन की परिकल्पना का सूत्रपात होते ही, भारत का कृषि उत्पादन काफी गंभीर हद तक क्षतिग्रस्त होगा, कृषि पैदावार भी घट जाएगी। सरकारी प्रचार हमें यह जानकारी देता रहा है कि हम खाद्यान्न में स्वनिर्भर हैं, जबकि दूसरी तरफ वास्तविकता यह है कि गेहूँ की फसल उम्मीद मुताबिक न होने की वजह से, पिछले दो वर्षों से रूस से गेहूँ आयात करके, देश की राशन-व्यवस्था को सँभालना पड़ रहा है। अब, अगर खेती की ज मीन खासकर उर्वर खेती की जमीन का क्षेत्र अगर कम हो जाए, तो खाद्यान्न में स्वनिर्भर होने का दुष्प्रचार भी नहीं किया जा सकेगा। किसी भी जनसमूह पर कब्जा करने का सबसे मजबूत हथियार उसके खाद्य जुटाने के स्रोत को नियंत्रित करना है। खैर यह तो हम सब अपने आस-पास हर वक्त देख रहे हैं। बी.पी.एल. कार्ड, ज मीन का पट्टा वगैरह दिलाने के नाम पर सी.पी. एम पार्टी किस तरीके से जनजीवन को नियंत्रित कर रही है, यह भी हम पल-पल देख रहे हैं।

> भारत में फ ी व्यक्ति सालाना खाद्य-फसल उत्पादन 200 केजी है, जहाँ दुनिया में औसत उत्पादन 309 केजी है। अ. ई. सा., 2005-06

अब, अगर कृषि जमीन का क्षेत्र कम हो जाए, तो फसल भी कम हो जाएगी, खाद्य-फसल की कीमतें बढ़ जाएँगी। सबसे बड़ी बात यह कि आयात के बिना, आभ्यन्तरीन माँग पर काबू पाना अंसभव हो जाएगा और यही व्यवस्था, खाद्य-फसल के कारोबारी बहुजातीय संस्थाओं के लिए सर्वाधिक उल्लास का विषय है। इस बीच उन लोगों को भारत में खाद्य-फसल के खुदरा कारोबार की अनुमति मिल गई है। हाल ही में यह भी पता चला है कि भारतीय खाद्य निगम के मुकाबले अमेरिकी बहु-जातीय कार्गिल कंपनी प्रति किलो पर 50 पैसे कम कीमत पर, सारे गेहूँ खरीदती जा रही है। फलस्वरूप भारतीय खाद्य निगम, गेहूँ-संग्रह के निर्धारित परिमाण के आस-पास तक भी नहीं पहुँच सकी है। अस्तु, आगामी मौसम में राशन-व्यवस्था में गेहूँ का अकाल पड़ जाएगा, आयात में वृद्धि होगी। दूसरी तरफ, कार्गिल कंपनी की हेराफेरी से आटे-मैदे के दाम बढ़ जाएँगे। परिस्थिति अभी से उसी ओर मुड़ रही है, ऐसे में विभिन्न सेज और अन्यान्य प्रस्तावित उद्योगों के लिए कृषि-जमीन अगर हाथ से निकल गई, तो इसकी परिणति भयंकर होगी, इसका अंदाज ा लगाना मुश्किल नहीं है।

खाद्य-फसल की उत्पादन-वृद्धि की दर में, सन् 1981-82 से सन् 1990-91 के बीच 2.99 प्रतिशत की तुलना में सन् 1991-92 से 2003-04 के बीच 1.25 प्रतिशत का ह्रास हुआ है। अ.ई.सा., 2005-06

सेज कानून की धारा 44 में कहा गया है कि कोई सेज संस्था अगर कृषि-सामग्री का कारोबार करे, तो उस सेज इलाके के बाहर भी समझौता-खेती कर सकेगी। इसके लिए ज रूरी खाद, बीज, कीटनाशक बिना शुल्क के ही इस्तेमाल कर सकेगी। कृषि-सामग्री की कारोबारी सेज संस्थाएँ दो तरीके से सामग्री संग्रह कर सकती हैं। पहला तरीका तो यह है कि सेज के प्रक्रियाकरण अंचल में ही, वह खलिहान तैयार करके, फसल उत्पादन कर सकती है। दूसरा तरीका है, आभ्यन्तरीन कृषि-सामग्रियों को बाज ारों से खरीद सकती है। अगर पहला तरीका अपनाया गया, तो यह तरीका प्रथागत श्रम-निर्भर कृषि को उजाड़कर, बहुजातीय संस्था द्वारा पूँजी निर्भर मशीनी उत्पादन को आसान बनाना होगा। अगर दूसरा तरीका अपनाया गया, तो कृषि-सामग्रियों की सप्लाई लगातार कायम रखने के लिए बहुजातीय कंपनियाँ यह चाहेंगी कि उन लोगों की पसंद मुताबिक फसलों की खेती हो। इस संदर्भ में समझौता-खेती कानूनी हो जाने की वजह से, जाहिर है कि वे लोग सबसे उर्वर ज मीनों पर ही टूट पड़ेंगे।

जेम संस्था द्वारा सेज से बाहर के अंचलों में समझौता-खेती के फलस्वरूप और जेम को प्राप्य सुयोग-सुविधा में ही खाद-बीज, कीटनाशक वगैरह के इस्तेमाल का मौका मिलेगा और असल में सेज इलाका, अपनी घोषित सीमा के बाहर भी फैल जाएगा। ऐसे में समझौता-खेती का मतलब है, नील कर जमाने को इतिहास के पन्नों से निकालकर अब फिर, नये सिरे से चालू करना। यूँ भी ज्यादा मुनाफेदार फसलों की और ज यादा पैदावार बढ़ाने के लालच में बहुजातीय संस्थाओं द्वारा निर्मित महँगे, अधिक फलनशील बीज व्यवहार करने की प्रवणता को उकसाया जा रहा है। चूँकि ये बीज प्राकृतिक पद्धति से तैयार नहीं किए गए हैं। इसलिए इनके लिए प्रचुर पानी, रासायनिक खाद और कीटनाशकों की जरूरत पड़ती है यानी कृषि में अच्छी पूँजी लगाने की जरूरत पड़ती है। फसल की बिक्री होने पर, अच्छा मुनाफा होगा, इस उम्मीद में बहुतेरे किसान अपने घर का लोटा-गिलास तक गिरवी रखकर, कज र्लेकर, इस किस्म की फसलें उगाने में जुटे हैं। परिणाम यह होता है कि बहुतेरे किसानों के लिए आत्महत्या के अलावा और कोई राह नहीं बचती। महाराष्ट्र-आंध्र में आत्महत्या करने का सिलसिला अर्से पहले से शुरू हो गया है। यहाँ तक कि पश्चिम बंगाल भी उनके खूंखार पंजों से आज ाद नहीं है। हालाँकि पश्चिम बंगाल में इस किस्म की आत्महत्याओं को सी.पी.एम., नाजायज प्रेम की कथा, पूरी दक्षता से प्रचार कर रही है।

समझौता खेती का मतलब है मौसम के शुरू में ही कंपनी, किसानों को निर्धारित फसल उगाने के लिए अग्रिम राशि देगी। उस अग्रिम राशि में बीज, खाद, कीटनाशक की कीमत भी शामिल होगी। फसल की पैदावार, कंपनी अपनी मर्जी-मुताबिक दामों में खरीद लेगी। चूँकि बयाना पहले ही दिया जा चुका है। बिक्री मूल्य में अगर पटरी न भी बैठे तो भी किसान उनके ही दामों में अपनी फसल बेचने को मजबूर होगा। खरीदी हुई फसल की कीमत में से, बयाने में दी हुई राशि काट ली जाएगी। अब अगर किसी कारणवश, किसी किसान की फसल की क्वालिटी, कंपनी द्वारा तय की हुई क्वालिटी से कम हुई, तो कंपनी वह फसल खरीदने से इनकार भी कर सकती है। इस स्थिति में बयाने की राशि, किसान को वह फसल बाजार में बेचकर चुकानी होगी। यानी वस्तुस्थिति यह है कि गाँवों के असंगठित किसानों को जोतदार-महाजनों के शिकंजे से 'मुक्त' कराने के बाद, उन लोगों को बहुजातीय संस्था नामक रक्तलोलुप बाघ के पिंजरे में छोड़ दिया गया। बंगाल-बिहार के किसानों ने अपनी जान देकर, नील खेती की कीमत प्राप्त की थी। अब वही दृश्य केंद्रीय और राज्य सरकार की देख-रेख में दुहराया जाएगा।

बाज ार में प्रचलित चंद मिथ (मिथ्या)

जो या आजकल जिस किस्म के औद्योगीकरण का आह्वान किया जा रहा है, उनके महन्तगण इस कर्मकांड के लिए सैकड़ों तरह के तर्क हाजि र करते हैं। उनमें से कई तर्कों पर विचार हम पहले कर चुके हैं। आइए, इस किस्म के चंद लोकप्रिय वक्तव्यों का तात्पर्य समझने की कोशिश करें।

ये लोग बार-बार यह समझाने की कोशिश कर रहे हैं कि भारत में राष्ट्रीय आय का मुख्य भाग, कृषि का ही अवदान है। लेकिन, विभिन्न उन्नत देशों में राष्ट्रीय आय में उद्योग का अवदान अधिक है। इसलिए हम लोगों को भी येन-केन-प्रकारेण उद्योग यानी बृहद् उद्योग की तरफ ही बढ़ना होगा। यह सच भी है। यूरोप और अमेरिका के देशों में कृषि से अर्जित आय के मुकाबले उद्योग से उपलब्ध आय का परिमाण ज यादा है। लेकिन, यह विषय यहीं तक सीमाबद्ध नहीं है। लेकिन विश्व के तथाकथित विविध उन्नत देश कृषि में भी उन्नत हैं और वे लोग कृषि-सामग्रियाँ भी बाहर भेजते हैं। बहुत-से मामलों में उद्योग का आधार ही कृषि-सम्बन्धी सामग्रियाँ हैं। यथा स्वीडन और डेनमार्क की उद्योग-व्यवस्था का मूल आधार ही है डेयरी उद्योग। अर्थात् उन्नत देश कृषि और उद्योग में समान रूप से उन्नति कर रहे हैं। उन लोगों ने कृषि की हत्या करके या कृषि के विनिमय में उद्योग-स्थापन नहीं किया।

यह तर्क भी दिया जाता है कि विदेशी मुद्रा भंडार को सुस्थिर करने की जरूरत है। इसके लिए जरूरी है, निर्यात में वृद्धि और इसलिए निर्यातमूलक उद्योग-स्थापन को प्रोत्साहित करना भी अतिशय ज रूरी है। भारत का आर्थिक-चित्र देखें, तो पता चलता है कि मूलतः सन् 1991 के बाद से निर्यात कई गुना बढ़ा है। और विभिन्न सरकारें, इस बारे में अपने प्रचार का ढोल पीटती रही हैं। भारत से कोयला-लोहा समेत विभिन्न खनिज यानी उद्योग के बेशुमार कच्चे माल निर्यात किए जा रहे हैं। लेकिन, एक बात काफी एहतियात से दबाए रखते हैं कि इस साल आयात भी और कई गुना ज यादा बढ़ गया है। आयात की तालिका में भोग्य-सामग्रियों से लेकर रोजमर्रा के प्रयोग के सारे द्रव्य भी इसमें शामिल हो गए हैं। शेयर बाजारों में विदेशी पूँजी की जो बाढ़ आई है, उसके फलस्वरूप आयात का खर्च, फिलहाल बढ़ा है। लेकिन आयात अगर और बढ़ाना पड़ा, तो और अधिक विदेशी मुद्रा की ज रूरत होगी तथा इसी वजह से निर्यात-वृद्धि और निर्यातमूलक उद्योग तालिका पर एक नजर

तालिका-2

वर्ष	आयात (डॉलर में)	निर्यात (डॉलर में)
1990-91	2407.2 करोड़	1814.5 करोड़
1991-92	1941.0 करोड़	1786.4 करोड़
1992-93	2188.1 करोड़	1853.7 करोड़
1993-94	2330.6 करोड़	1853.7 करोड़
1994-95	2865.4 करोड़	2633.0 करोड़
1995-96	3667.8 करोड़	3179.4 करोड़
1996-97	3913.2 करोड़	3346.9 करोड़
1997-98	4184.4 करोड़	3500.6 करोड़
1998-99	4185.7 करोड़	3365.8 करोड़
1999-00	4615.3 करोड़	3753.7 करोड़
		अ.ई.सा., 1998-2000

विश्व में पहला सेज चीन में तैयार हुआ था। चीन से तुलना करते हुए यह भी कहा जा रहा है कि सन् 1980 के दशक के प्रारम्भ में फ ी व्यक्ति राष्ट्रीय आय की दृष्टि से चीन और भारत समतुल्य थे। लेकिन सेज स्थापन के बाद, 25 वर्षों में चीन की फ ी व्यक्ति राष्ट्रीय आय, भारत की तुलना में काफी बढ़ गयी है यानी चीन ने काफी उन्नति की है। यह बात पहले ही बता दें कि फ ी व्यक्ति राष्ट्रीय आय,

नितान्त अर्थहीन धारणा है। किसी भी देश की कुल राष्ट्रीय आय को जनसंख्या से विभाजित किया जाए, तो फ ी व्यक्ति राष्ट्रीय आय की जानकारी हो जाती है। एक उदाहरण के जरिये, इस धारणा की निस्सारता को समझा जा सकता है। फज र्ं करें, किसी व्यक्ति की कुल सालाना आय एक करोड़ रुपये है और दूसरे की दस हज ार रुपये। अगर इन दोनों को जनसंख्या के आधार पर कहा जाए, तो फ ी व्यक्ति राष्ट्रीय कितने हुए? 50 लाख, 5 हजार रुपये। इस फ ी व्यक्ति राष्ट्रीय आय की संख्या से क्या दूसरे व्यक्ति के घर-संसार की रोजमर्रा के आहार, चावल-दाल की समस्या का पता चल सकता है?

यह सच है कि सेज स्थापना के बाद के समय में चीन की फ ी व्यक्ति राष्ट्रीय आय बढ़ गयी है, कुल राष्ट्रीय पैदावार में भी वृद्धि हुई है। लेकिन साथ ही, इसी के समानान्तर आर्थिक वैषम्य भी बढ़ा है। चीन के सेज के अन्तर्गत अंचलों में शरणार्थी किसान वर्ग को, नाममात्र की मजूरी पर, किसी भी काम के लिए राजी होने के अलावा और कोई राह नहीं है। खदान-दुर्घटनाओं की संख्या भी बढ़ गयी है। जानकारों की राय में चीन में विविध सेज में श्रमिक वर्ग प्रायः मध्ययुगीन परिवेश में, काफी कम मजूरी पर, काम करने को लाचार हैं। श्रम-समय यानी दैनिक काम और मेहनत का कोई ठिकाना नहीं है, न कोई सहायक सुयोग-सुविधा ही है। फ ी व्यक्ति राष्ट्रीय आय के गप्प के साथ-साथ ये तमाम घटनाएँ सामने नहीं लायी जातीं, क्योंकि तभी झोली से बिल्ली निकल पड़ेगी।

> चीन को जन-सुरक्षा मंत्रालय के तथ्य मुताबिक सन् 2005 की दुर्नीति, बकाया मजूरी और पेंशन-भत्ता तथा ख़ासकर गै र-कानूनी तरीके से ज मीन दखल के खिलाफ 87,000 जन-प्रतिवाद संगठित हुए, जो पूर्ववर्ती दशक की तुलना में प्रायः चार गुना ज यादा है।
>
> फ्रंटलाइन, 06 अप्रैल, 2007

मुख्यतः नन्दीग्राम के जन-आक्रोश का सामना करते हुए, पश्चिम बंगाल राज्य सरकार और सी.पी.एम. के नेताओं ने, हल्दिया से तुलना करते हुए, यह प्रमाणित करने की कोशिश की है कि औद्योगीकरण के फलस्वरूप हल्दिया में असंख्य नौकरी और काम-धंधे का मौका मिला है और एक पिछड़े हुए ग्रामांचल से हल्दिया, अति उन्नत नगर के रूप में उन्नत हो गया है। सेज और उद्योग-स्थापन के जरिये अन्यान्य स्थानों में भी उसी कि स्म की उन्नति करना होगी। यह सच है कि बन्दर-पेट ्रो कॉम्प्लेक्स और अन्यान्य उद्योग का हाथ थामकर, हल्दिया में व्यापक उद्योग और सेवा-आधारित रोज गार उपलब्ध हुआ है। लेकिन, 70-80 के दशक में हल्दिया में जितने किसान और कृषि-आधारित जीविका में लिप्त लोग उजाड़ दिए गए, उनमें

से कितने हल्दिया में टिके हुए हैं इसकी गणना क्या की जा सकती है? क्या जीविकाहानि या जीविकालाभ की प्रतिशतता का अनुपात मिल सकता है? नहीं कोई भी सरकारी परिसंख्या में यह राष्ट्रीय तथ्य नहीं मिल सकता। क्यों? क्या इसलिए कि असली तस्वीर, इससे बिल्कुल प्रतिकूल है?

सी.पी.आई.एम. के नेतागण और भी एक बात लगातार दुहराये जा रहे हैं। वह यह कि गुजरात, महाराष्ट्र या उड़ीसा में सेज या कोई बृहद् उद्योग को लेकर, कोई व्यक्ति, कोई विरोध नहीं कर रहा है। जितना भी विरोध हो रहा है वह सब सिर्फ पश्चिम बंगाल में हो रहा है। कुछ लोगों को इसके पीछे विदेशी रुपयों की मदद भी नज र आ रही है। धन्य हैं सी.पी.आई.एम. के रहते पश्चिम बंगाल के बारे में अन्य किसी के लिए अर्थ जुटायें, विदेशी शक्तियाँ शायद इतनी मूर्ख नहीं हैं। और महाराष्ट्र या उड़ीसा? वहाँ तो सी.पी.आई.एम. और अन्यान्य वामपंथी लोग, खुद ही मेधा पाटकर या अरुंधति राय के साथ, कृषक-उच्छेद विरोधी आन्दोलन में शामिल हैं। कोई महाराष्ट्र में कृषक-उच्छेद-विरोधी आन्दोलन न भी करे, वहाँ (उन लोगों का अस्तित्व भले न हो) अगर पश्चिम बंगाल में उन लोगों को आन्दोलन करने का अधिकार नहीं है, तो महाराष्ट्र और पश्चिम बंगाल में सी.पी.आई.एम. का, दूसरी तरह का आचरण क्यों है? इसके लिए वे कौन-सा बहाना पेश करेंगे? असल में, उनका कोई भी बहाना ग्रहणयोग्य नहीं है। इसलिए नन्दीग्राम में पुलिस और कैडरों से हमला कराने के बाद सी.पी.आई.एम. और महाराष्ट्र या उड़ीसा में भी आन्दोलन की लगाम खींचने को मज बूर होना पड़ा।

एक नज र में अब तक हमने सेज का तात्पर्य और नतीजों के बारे में विस्तृत विचार किया। अगर उन सबको मिलाकर, सार-संक्षेप में कहा जाए, तो भारत के निजी आर्थिक-सामाजिक परिवेश में सेज योजना का प्रकोप कुछ यूँ होगा

1. तत्त्व की दृष्टि से ही नहीं, वास्तविक रूप में भी सेज भारत के मानचित्र में एक अ-भारतीय अंचल हो उठेगा, जहाँ भारत के सार्वजनिक नियम-क ानून न मानना ही आम क ानून बन जाएगा।
2. सार्वजनिक क ानूनों का उल्लंघन करना ही, प्रचलित क ानून बन जाएगा, इसलिए सेज अंचल में आम लोगों के गणतांत्रिक अधिकार का प्रसंग ही अ-गणतांत्रिक प्रश्न बन जाएगा।

3. निर्माता और उत्पादक संस्थाएँ, विभिन्न, कि स्म के टैक्स से रिहाई पा जाएँगे। फलस्वरूप राजस्व-हानि होगी और इसी सूत्र के सहारे सामाजिक सुरक्षा में राष्ट्रीय-ख़र्च के लिए अनुमोदित रकम कम हो जाएगी।
4. निर्माता, बिना किसी शुल्क और टैक्स चुकाये, अनाप-शनाप प्रमोटिंग का धंधा कर सकेंगे और उसी के जरिये प्रचुर मुनाफा समेत, निवेश का बहुत बड़ा हिस्सा काफ ी तेज ी से वसूल कर सकेंगे।
5. श्रम कानून का अनुपालन लगभग ख़त्म कर दिया जाएगा। फलस्वरूप SEZ, Special Exploitation Zone या विशेष शोषण अंचल बन जाएगा।
6. जेज़ के माध्यम से कार्पोरेट जमींदारी व्यवस्था की शुरुआत होगी।
7. सेज स्थापन के फलस्वरूप जितने सारे रोज गार की सृष्टि होगी, उससे कहीं ज यादा लोग अपनी नौकरी-चाकरी गँवा देंगे। शहर में उच्च-शिक्षित बेरोज गार लोगों को नौकरी मिलेगी और विपुल संख्यक ग्रामीण जन-गण अपना पेशा और परिवेश खो देंगे।
8. कृषि-उत्पादन पर भयंकर आघात होगा। खाद्य-फसल की आयात में वृद्धि होगी और इस तरह बहुजातीय कम्पनियों की उछल-कूद और धौंस बढ़ जाएगी।

अर्थात् निर्यात मूलक उद्योग के नाम पर सेज गठन के फलस्वरूप, सामग्रिक तौर पर भारतवर्ष के आर्थिक-सामाजिक ढाँचे में जो थोड़ा-बहुत सन्तुलन बच रहा है, वह भी ध्वस्त हो जाएगा। गाँव और अधिक अधःपतित होंगे। उनकी जगह चकाचौंध भरा शहर बस जाएगा। इस उन्नयन की आग में अनगिनत लोग अपना देश-गाँव, आत्मीय-स्वजन, अड़ोसी-पड़ोसी से हाथ धो बैठेंगे और रेल लाइन के किनारे या फ्लाई-ओवरों के नीचे आश्रय लेंगे। चंद बीस करोड़ उच्च वर्ग के लोगों की सुख-सुविधा के लिए, अस्सी करोड़ दीन-दरिद्र भारतवासी बलि हो जाएँगे।

उसके बदले में मिलेगा क्या? मिलेगी विदेशी मुद्रा, जिसे ख़र्च करके पूरी स्वच्छन्दता से आयात किया जा सकेगा। शत-प्रतिशत विदेशी-विनियोग आएगा। विश्व वाणिज्य संस्था, विवश बैंक या अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ भंडार का सर्टिफिकेट 'भारत जाग उठा है' प्राप्त होगा। समूचे विश्व का एकछत्र प्रभु अमेरिका का खूब-खूब प्यार मिलेगा ये तमाम लोभ क्या आसानी से छोड़ा जा सकता है? इसलिए भारत में प्रतिष्ठित तमाम राजनैतिक पार्टियाँ, सेज का गुणगान करने में एकबारगी जुट गयी हैं।

तालिका-3

गरीब जनसंख्या का प्रतिशत दर

वर्ष	ग्रामीण	शहरी	कुल
1989-90	33.70	36	34.28
1990-91	35.05	35.29	35.11
1992	41.70	37.80	40.70
1994-95	38.03	34.24	36.98
1995-96	38.29	30.05	36.08
1997	38.64	33.97	37.23
1998	45.25	34.58	43.01

एस.पी.गुप्ता, ट्रिकल डाउन थियोरी रीविजि टेड दि रोल ऑफ एम्प्लॉयमेंट एण्ड पोवर्टी

सभी सियारों की वही हुआँ-हुआँ

यह सवाल उठना नितान्त स्वाभाविक है कि देश की अर्थनीति का इस क दर ह्रास होगा, यह जानते हुए भी राज्य सरकारें और उन सबकी संचालक राजनैतिक पार्टियाँ सेज गठन के लिए इतनी उत्साहित क्यों हैं? कोई-कोई यह कह सकता है कि व्यक्तिगत या दलगत दुर्नीति की आकांक्षा से ही इतना उत्साह उमड़ा है। लेकिन, महज दुर्नीति के प्रसंग से इतने बड़े उद्योग की व्याख्या नहीं की जा सकती, यह समझना बेहद आसान है। तब रहस्य कहाँ छिपा है? यह समझने के लिए हमें बीस वर्ष पीछे जाना होगा।

सन् 1980 के दशक के आखिरी दिनों से ही विश्व में सर्वत्र ही पूँजीवादी अर्थनीति पर व्यापक संकट घिर आया। सामानों का बाज ार धीरे-धीरे संकुचित होने लगा। इसलिए तमाम बहुजातीय कार्पोरेशन समेत, सामग्रिक तौर पर समस्त पूँजीवादी संस्थाओं का मुनाफा-दर धीरे-धीरे गिरने लगा। यहाँ तक कि नया कोई निवेश क्षेत्र खोज न पाने की वजह से वे लोग बची-खुची पूँजी बिना इस्तेमाल किये, यूँ ही रख छोड़ने को विवश हो गए। ऐसी परिस्थिति में भूमंडलीकरण के नाम पर गैट नामक एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था ने एक नया कार्यक्रम हाजि र किया। सन् 1986 में गैट के उरुगुवे राउंड की बैठक में तत्कालीन सभापति, आर्थर डंकेल ने इस बारे में ढेरों प्रस्ताव पेश किये। भूमंडलीकरण के मुद्दे ने इस कार्यक्रम को निम्नलिखित प्रमुख हिस्सों में विभाजित किया :

1. तृतीय विश्व के सभी देश, देशी कृषि और उद्योग में जो तमाम रक्षाकवच की सुविधाएँ उठा रहे हैं, उन सबको ध्वंस करके, उन देशों के बाज   ारों में, साम्राज्यवादी संस्थाओं की सामग्रियाँ अबाध रूप से प्रवेश कर सकें, इसका इन्तज   ाम करना। Level Play round तथ्य के नाम पर अब तक देशी उद्योग और कृषि को थोड़ी अतिरिक्त सुविधाएँ देने का कार्यक्रम एकदम से मिट्टी में मिला दिया गया।

2. सामग्रियों के अबाध प्रवेश, अबाध निवेश के लिए, विविध क़ानूनी बाधा रद्द करने का प्रबन्ध करना। Structural Adjustment नामक तथाकथित ये सारे इन्तज़ाम के दम पर साम्राज्यवादी पूँजी, किसी भी पल, किसी भी देश में अड्डा गाड़ सके, इसकी सुविधा देना।

3. उन्नत दुनिया की महँगी मजूरी और अन्यान्य सामाजिक सुरक्षा खर्च को नज़रअन्दाज करते हुए, मुनाफा दर वृद्धि के लिए तीसरी दुनिया का अपेक्षाकृत सस्ता श्रम, सस्ते कच्चे माल और कमजोर सामाजिक सुरक्षा ढाँचा, किसी विशिष्ट अंचल में उत्पादन केन्द्र को हटा ले जाना। इसलिए सन् 1990 के दशक से ही विविध बहुजातीय संस्थाओं ने यूरोप-अमेरिका के बजाय एशिया, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका में, नये सिरे से निवेश शुरू किया।

4. भारतवर्ष के मामले में भी हमने देखा है कि आयात शुल्क का दर कम करते-करते अन्त में इसे उत्पादन शुल्क के समस्तर पर ले आया गया है। अर्थात् देशी सामग्रियों और विदेशी सामग्रियों में कहीं, कोई फर्क़ नहीं है। हम देख चुके हैं कि विदेशी अर्थ प्रतिष्ठानों के लिए शेयर बाज़ारों को उन्मुक्त कर दिया गया है और धीरे-धीरे प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की सर्वोच्च सीमा बढ़ा दी गई है। विदेशी निवेश के सामने उत्पादन और सेवा के विभिन्न संरक्षित क्षेत्र भी खोल दिए गए हैं।

5. इस प्रक्रिया की शुरुआत नरसिंहा राव की कांग्रेसी सरकार के ज़माने में हुई थी। तीसरे मोर्चे के देवेगौड़ा और गुजराल मन्त्रिमण्डल के अल्पकालीन समय में भी इसी नीति का धारावाहिक विस्तार होता रहा। वाजपेयी की एन.डी.ए. सरकार के समय में इस नीति के दरवाज़े पूरी-पूरी तरह उन्मुक्त हो गए और अन्त में श्री मनमोहन सिंह के यू.पी.ए. मन्त्रिमण्डल द्वारा सेज   क़ानून पास करके, यह वृत्त पूरा हो गया। इस 18 वर्ष के इतिहास में ऐसे एक भी संसदीय दल का अता-पता नहीं मिलेगा, जो लोग किसी भी तरीके से, किसी भी सरकार के साथ सम्बद्ध नहीं थे। इस इतिहास को दिमाग में रखते हुए, हम आगे बढ़ सकते हैं। प्रसंगवश यह प्रसंग शुरू करने से पहले ही, हम यह भी देख चुके हैं कि पार्लियामेंट में सेज   क़ानून पास करते समय, किसी एक भी दल ने इसके खिलाफ वोट नहीं दिया।

आइए, अब इस प्रसंग में विभिन्न राजनैतिक पार्टियों की भूमिका पर नज़र डाली जाए।

कांग्रेस : कांग्रेस शुरू से ही भूमंडलीकरण की समर्थक थी। लेकिन, अगर मोल-भाव करके, थोड़ी-बहुत छूट भी वसूल कर ली जाए कांग्रेस का यही मूल लक्ष्य था। कांग्रेस के प्रयास से ही सेज बिल पार्लियामेंट में पेश किया गया। हमें यह भी याद रखना चाहिए कि अमेरिकी प्रेसिडेंट, जॉर्ज बुश का आकस्मिक भारत-प्रेम और सेज क़ानून का पास होना, बिल्कुल समसामयिक है। कलिंगनगर का जन-आन्दोलन और सर्वोपरि नन्दीग्राम का जन-प्रतिरोध के तजुर्बे से कांग्रेस को यह अन्दाज़ा हो गया है कि सेज नामक भूरिभोज, देशवासी हजम नहीं कर पा रहे हैं। इसीलिए कांग्रेस फिलहाल थोड़ा-बहुत मलहम लगाने में जुट गई है। लेकिन, चाहे जो भी हो, कांग्रेस, सेज और भूमंडलीकरण के कार्यक्रम को पूरी तरह रूपायित करने के लिए वचनबद्ध है।

बीजेपी : बीजेपी की राय, कांग्रेस से बिल्कुल मिलती है। वस्तुतः सेज क़ानून पास किए बिना ही, सेज गठन का सूत्रपात, बीजेपी के नेतृत्वाधीन एन.डी.ए. सरकार के ज़माने से ही हो गया। नन्दीग्राम के जन-आन्दोलन की आग झेलते हुए, बीजेपी के नेतागण चाहे जितना भी गर्मागर्म बोली, आवाज़ें कसें, लेकिन सेज क़ानून वापस लेने की माँग उन लोगों ने कभी भूल से भी नहीं उठाई। बल्कि भारत में जो चंद राज्य सरकारें सेज का फ़ायदा (!) उठाने के लिए, सबसे ज़्यादा उछलकूद मचा रही हैं, उनमें अन्यतम प्रधान है, बीजेपी संचालित, नरेन्द्र मोदी की गुजरात सरकार। जाहिर है कि राजनैतिक 'गिमिक' का सवाल अगर छोड़ दिया जाए, तो बीजेपी भी सेज गठन के पक्ष में है।

आंचलिक पार्टियाँ : भारत की राजनीति में प्रायः दो दशकों से ही आंचलिक पार्टियाँ फल-फूल रही हैं। दो-दो बृहद् पार्टियाँ कांग्रेस या बीजेपी की भी हिम्मत नहीं है कि आंचलिक पार्टियों की सहायता के बिना, केन्द्रीय मन्त्रिमंडल गठन करें। इसलिए, अगर ये पार्टियाँ चाहें, तो भूमंडलीकरण या सेज कार्यक्रम को रोक सकती थीं। इसके विपरीत ये सभी पार्टियाँ इस बारे में उन्हीं के क़दम से क़दम मिलाती हुई आगे बढ़ आई हैं। भारत में ढाँचा-संस्कार के नाम पर प्रचलित व्यवस्था को विध्वस्त करने के मामले में राज्य सरकार क्षेत्र में, चन्द्रबाबू नायडू और उनके नेतृत्व में आन्ध्र में तेलुगु देशम मंत्रिमंडल ही अग्रदूत था। सेज सम्बन्धी प्राथमिक योजना को जिन्होंने वास्तविक रूप में रूपायित किया, वे थे वाजपेयी मंत्रिमंडल के वाणिज्य मंत्री, मुरासोली मारान! वे डी.एम.के. के सांसद थे। उधर, उत्तर प्रदेश में, अम्बानी के नेतृत्व में सेज गठन के लिए कृषक-उच्छेद में बेभाव जुट गई थी, मुलायम सिंह

की समाजवादी पार्टी की सरकार। यानी ऐसा कोई आंचलिक दल नहीं है, जो इस प्रक्रिया के विरुद्ध हो। हमें याद रखना चाहिए कि तृणमूल कांग्रेस के दो सांसदों ने भी सेज क़ानून के पक्ष में वोट दिया था। हालाँकि आज बदली हुई परिस्थिति में वे लोग सेज कानून रद्द करने की माँग कर रहे हैं।

सी.पी.आई.एम. : सी.पी.आई.एम. की भूमिका के बारे में विस्तृत बातचीत की ज़रूरत है, क्योंकि इन लोगों ने कांग्रेस या बीजेपी की तरह, कभी भी खुल्लम-खुल्ला भूमंडलीकरण के पक्ष में मुँह नहीं खोला, बल्कि भूमंडलीकरण के विरुद्ध सी.पी.आई.एम. ने समूचे भारत में जितनी मीटिंग, सेमिनार, समावेश, जुलूस, पुस्तिका, पोस्टर वगैरह के आयोजन किए, संभवतः समूची दुनिया में ऐसा कभी नहीं हुआ। फलस्वरूप सी.पी.आई.एम. भूमंडलीकरण के पक्ष में है, यह बात कागजी कार्रवाई में साबित करना मुश्किल है। यहीं छिपी हुई है, इस पार्टी की तात्विक चालाकी।

सी.पी.आई.एम. ने भूमंडलीकरण प्रक्रिया का तात्विक विरोध करने के साथ-साथ यह कहना भी शुरू कर दिया कि हम सब चाहें या ना चाहें, भूमंडलीकरण हो रहा है, होता जा रहा है और होता रहेगा। अस्तु, जो निश्चित है, उसे रोकना जब संभव नहीं है, तो उससे जितनी सुविधा वसूल की जा सके, हमें वही कोशिश करनी चाहिए। मुद्दे की बात यह है कि भूमंडलीकरण प्रक्रिया का हाथ पकड़कर, विदेशी जब भारत में पूँजी लगाना चाहते हैं तो उसका कम-से-कम स्वागत करना चाहिए। इस वजह से और कुछ नहीं, तो कुछेक बेरोज़गार लोगों को नौकरी तो मिल जाएगी। इसी तर्क के बल पर ही, सी.पी.आई.एम. संचालित पश्चिम बंगाल की वामफ्रंट सरकार ने माइक्रोसॉफ्ट, मैकिन्से से लेकर इंडोनेशिया-आधारित सालेम समूह सभी को पश्चिम बंगाल में सादर आमंत्रित किया। यहाँ तक कि भूमंडलीकरण की परिकल्पना-मुताबिक, सरकारी अधिगृहीत, तथाकथित रुग्ण संस्थाओं का दायित्व झाड़ फेंकने के लिए ब्रिटिश साम्राज्यवादी संस्था, डी.एफ.डी.ए. से आर्थिक मदद लेने में भी पीछे नहीं हटी। तर्क यह दिया गया कि जब सभी यही कर रहे हैं, तो हम भी अगर यही न करें, तो मुकाबले में पिछड़ जाएँगे। यानी बाकी सभी लोग जो स्वेच्छा से कर रहे हैं, सी.पी.आई.एम. वह नितान्त मजबूरी में करने की दुहाई देती है।

फर्ज़ करें, अगर किसी मुहल्ले में वेश्यालय बन रहा है, यह ख़बर सुनकर, कोई माँ अगर अपनी बेटी से कहे 'हम सब नैतिक रूप से इसका विरोध करती हैं, लेकिन वेश्यालय जब बन ही रहा है, तब हम भी इस मौके का फ़ायदा क्यों न उठाएँ ' तो यह बात सुनने में कैसी लगेगी? सी.पी.आई.एम. के वक्तव्य को भी, इससे अलग भला और कुछ कहा जा सकता है? वे लोग जुबान से भूमंडलीकरण का

विरोध करेंगे और कार्यरूप से अन्य सभी लोगों की तरह ही साम्राज्यवादी संस्थाओं के लिए सादर दरवाज़ा खोल देंगे। साथ ही साथ यह भी प्रचार करते रहेंगे कि उन लोगों ने जो सख्त-पुख्ता शर्तें रखी हैं, उन सबको मानकर, कारोबार करते हुए, पूँजीवादी संस्थाओं को थोड़ा-बहुत कम मुनाफा होगा।

जो के सवाल पर सी.पी.आई.एम. बाकी सबसे एक कदम आगे है। मन्त्रिमंडल से उन लोगों ने माँग की थी कि सेज की सर्वोच्च सीमा एक हज़ार हेक्टेयर करनी होगी। केन्द्रीय मन्त्रिमंडल की दायित्व प्राप्त कमिटी ने इसकी सीमा 5 हज ार हेक्टेयर की सिफारिश की थी, इस बात से वे लोग काफी क्षुब्ध हुए थे। वैसे सबसे ज़्यादा नाराज़ हुए, इसके फलस्वरूप राज्य सरकार सेज निर्माता की पक्षधर बनकर, ज़मीन अधिग्रहण नहीं कर पाएगी। इसकी वजह यह है कि इसके फलस्वरूप पश्चिम बंगाल में सेज के लिए ज़मीन संग्रह करना, वस्तुतः असाध्य हो उठेगा। आखिरकार 22 अप्रैल को केन्द्रीय मन्त्रिमंडल ने सी.पी.आई.एम. की वह माँग स्वीकार कर ली यानी इन दिनों केन्द्रीय सरकार दृढ़ता से सेज कानूनों का प्रयोग करे, इसके लिए सबसे ज़बर्दस्त दबाव, सी.पी.आई.एम. ही डाल रही है।

स्वनिर्भर योजना में ग्रामीण, दरिद्र महिलाओं को मामूली-सा कर्ज लेने के लिए, सालाना 12 प्रतिशत ब्याज देना पड़ता है। वहाँ टाटा कम्पनी, राज्य सरकार से सिंगुर में ज़मीन बाबत देय अर्थ (20 करोड़ रुपये पर सालाना 0.01 प्रतिशत ब्याज पर कर्ज़ उपलब्ध करती है। प्रसंगतः रतन टाटा, राष्ट्रीय निवेश सलाहकार कमीशन के चेयरमैन हैं।

हम ही हैं पहले...

केन्द्रीय सरकार द्वारा सेज क ानून का मसौदा पार्लियामेंट में पेश किए जाने से दो वर्ष पहले ही पश्चिम बंगाल की वामफ्रंट सरकार ने विधानसभा में West Bengal Special Economic Zone Bill-2003 पेश किया। केन्द्रीय क़ानून तैयार होने से बहुत पहले ही, सन् 2004 में यह बिल क ानून में परिणत हो गया। 35 धाराओं के साथ तैयार किए गए, इस क़ानून का मूल स्वर, केन्द्रीय क़ानून से हू-ब-हू मिलता है। अस्तु, कौन, किसका अनुसरण कर रहा है, यह समझना ख़ासा मुश्किल है।

पश्चिम बंगाल के क़ानून की धारा 2(i) में एक क़दम आगे बढ़कर, सेज को 'यह एक विदेशी भूखंड' कहकर अभिहित किया गया है। अर्थात् हमने चर्चा में सेज को जब 'देश में विदेश' कहकर अभिहित किया था, वह कोई अवान्तर बात नहीं थी, राज्य क़ानून ने आँख में उँगली घुसेड़कर यह दिखा दिया। लेकिन एक बात तो कहना ही होगी कि केन्द्रीय क़ानून में इस विषय को जिस तरीके से घुमा-फिराकर

पेश करने की कोशिश की जा रही है, राज्य क ानून में वह सब झमेला न करके, सेज को सीधे-सीधे 'विदेशी भूखंड' कह दिया गया है।

राज्य क़ानून की धारा 21 में कहा गया है कि सेज के अधिकारों को व्यावसायिक नीति मानकर ही सौंपे गए दायित्व का पालन करना होगा। श्रम-कानून या अन्यान्य क ानून-भंग के बारे में चर्चा करते हुए हमने जो अशंका जाहिर की है, राज्य क ानून ने दिखा दिया कि वह अशंका किस हद तक वास्तविक है। अर्थात् सेज के निर्माता और विभिन्न संस्थाओं पर निगरानी रखने के मामले में, सिर्फ वाणिज्यिक स्वार्थ पर ही विचार किया जाएगा, अन्यान्य विभिन्न सवाल, अवान्तर समझे जाएँगे। राज्य क़ानून ने खुल्लमखुल्ला यह घोषणा की है।

राज्य क़ानून की धारा 27 (1) में सेज के निर्माता और संस्थाओं द्वारा विभिन्न सामग्रियों और सेवा को ख़रीद-फरोख़्त के विभिन्न राज्य-स्तरों के टैक्स, शुल्क, सेस या फीस मुक्त होने की घोषणा की है। साथ ही सेज सम्बन्धी कोई भी स्थावर सम्पत्ति की बिक्री या हस्तान्तरण के मामले में कोई स्टाम्प-ड्यूटी या रजिस्ट्रेशन फीस नहीं लगेगी। इसकी घोषणा करते हुए धारा 27 (2) में यह जानकारी भी दी गई है। धारा 25 (6) में यह कहा गया है कि सेज संस्थाओं के मामले में बिजली-शुल्क में चिरस्थाई ढंग से छूट दी जाएगी।

केन्द्रीय क ानून और विधि प्रणयन से बहुत पहले ही पश्चिम बंगाल सरकार खुद आगे बढ़कर, भारतवर्ष में पहला सेज क ानून तैयार करके, देशी-विदेशी, तमाम संभावित निवेशकों की आस्था अर्जन करने की कोशिश कर रही है। गोखले ने क्या यूँ ही कहा था What Bengal thinks today India will think tomorrow?

जेज्ञ के सवाल पर अपनी अवस्थिति की सफाई देते हुए, सी.पी.आई.एम. के नेतागण बार-बार चीन का उदाहरण देते हैं। उन लोगों का वक्तव्य है कि 'समाजतांत्रिक चीन ने ही जब सेज को स्वीकार कर लिया है, तो हम किस खेत की मूली हैं?' चीन समाजतान्त्रिक है या नहीं, यह चर्चा यहाँ बेकार है। लेकिन 'चीन की राह' ही अगर 'हमारी राह' है, तो आज से पच्चीस वर्ष पहले भी सी.पी.आई.एम नेतागण चीन के नाम इतनी गाली-गलौज क्यों करते थे? या वे लोग इस क दर इसलिए उल्लसित हैं कि चीन, सी.पी.एम. की लाइन से हट आए हैं?

अब तक समूचे भारत में सी.पी.आई.एम. पार्टी वस्तुतः काफी ऊँचे दर्जे का मान-सम्मान पाती थी। बात चाहे साम्प्रदायिकता की हो या साम्राज्यवादी युद्ध प्रयास सभी मामलों में ये लोग गुरु-गंभीर वक्तव्य पेश करने के ही अभ्यस्त रहे हैं। नतीजा यह हुआ कि समूचे भारत में ही इन नेताओं की 'गुड-ब्वाय' छवि क़ायम थी।

लेकिन पहले सिंगुर और उसके बाद नन्दीग्राम में सी.पी.आई.एम. पार्टी की भूमिका, सबके सामने उजागर हो गई और इन लोगों की छवि को गहरा धक्का लगा है। इसलिए, अब एक तरफ ये लोग उस नुकसान की भरपाई की कोशिश में जुटे हैं, दूसरी तरफ और अधिक खुले तौर पर सेज योजना पर दृढ़ता से स्टैंड ले रहे हैं।

छोटे वाम शरीक : सी.पी.आई., आर.एस.पी. या फॉरवर्ड ब्लॉक ने यथारीति सेज क ानून के पक्ष में ही वोट दिया था। लेकिन उद्योग के नाम पर सी.पी.एम. की अतिशयता वे लोग बर्दाश्त नहीं कर पा रहे हैं। आज, ये लोग सेज क ानून रद्द करने की बात कर रहे हैं। लेकिन जुबान से सी.पी.एम. के विरोध का नारा लगाते हुए भी कार्यतः ज्यादा दूर तक आगे बढ़ने की हिम्मत या क्षमता उन लोगों में नहीं है।

अब कोई यह सवाल कर सकता है कि समालोचना तो किए जा रहे हैं, लेकिन इसके अलावा क्या और कोई राह है? किसी भी काम में दोष निकालना आसान है, लेकिन कोई विकल्प की राह सुझाना कठिन है। क्या कोई विकल्प राह बता सकता है? अगर नहीं बता सकता, तो सी.पी.आई.एम. का क्या दोष है! वे लोग भी तो भूमंडलीकरण का विरोध करने के बावजूद और कोई विकल्प न होने की वजह से आखिरकार इसे रफा-दफा करने को विवश हैं।

आइए, देखें, उन्नयन की कोई विकल्प रूपरेखा देना सम्भव है या नहीं।

विकल्प उन्नयन-कार्यक्रम

भारतवर्ष प्राकृतिक और मानव-सम्पद समृद्ध देश है। हमारे देश में आसमान तक फैली हुई उर्वर कृषि ज मीन है, विपुल अरण्यभूमि है, मिट्टी की गहराई में पर्याप्त लोहा, कोयला और अन्यान्य खनिज का भण्डार भरा पड़ा है। तीन-तीन सागर, गंगा, सिन्धु, ब्रह्मपुत्र समेत असंख्य नद-नदियाँ मौजूद हैं। सबसे बढ़कर, इस देश में सौ करोड़ देशवासी मौजूद हैं जिनको सुदीर्घ सांस्कृतिक और सामाजिक शान-शौकत का गौरवमय अधिकार है! जो लोग भारत को गरीब कहते हैं, वे सही बात नहीं करते। भारत कहीं से भी दरिद्र नहीं है, भारतवासियों को दरिद्र नहीं होना चाहिए था। लेकिन असमान-मिल्कियत और बंटन-व्यवस्था के प्रकोप से, आज अधिकांश भारतवासी हतश्री हाल में हैं। इसलिए भारत की प्रकृत उन्नति की शुरुआत के लिए, सबसे पहले जरूरी है कि इस असमान-मिल्कियत और बंटन-व्यवस्था को उखाड़ फेंका जाए और समान-मिल्कियत और बंटन-व्यवस्था की शुरुआत की जाए।

आज 'उद्योग चाहिए! उद्योग चाहिए' का नारा लगाते हुए, जो लोग शोरगुल मचा रहे हैं, उन लोगों ने क्या एक बार भी सोचा है कि समूचे देश में 1 लाख 74 हज ार

छोटे-बड़े-मंझोले कारखाने बंद क्यों हैं? सिर्फ श्रमिकों की फांकीबाज ी की वजह से? या मालिक निकम्मे हैं, इसलिए? कारखाने इसलिए बंद हुए हैं, क्योंकि वे लोग अपनी उत्पादन सामग्रियाँ बेच नहीं पाये यानी बाज ार न होने के कारण! उद्योग के मरने-जीने में, इस बाज ार का सवाल है। 100 करोड़ लोगों के देश में बाज ार आखिर क्यों नहीं है? इस सवाल का जवाब अपने-आप ही मिल जाएगा।

अर्थनीति की परिभाषा में बाज ार एक तात्विक धारणा है, जहाँ सामानों की ख़रीद-फ रोख़्त होती है। अब सामग्रियाँ बेचने के लिए पूँजीपति आते हैं और आम खरीदार, वे सामग्रियाँ खरीदते हैं। बाजार न होने का मतलब है, खरीदारों का अभाव! लेकिन ख़रीदार आखिर क्यों नहीं हैं? जन-गण क्या सभी साधु-संन्यासी बन गए हैं। किसी के मन में कोई चाह नहीं रह गयी है। सच्चाई इसके बिल्कुल विपरीत है। मानसिक चाह तो अनिवार्य रूप से क ायम है। लेकिन चाह पूरी करने की क्षमता नहीं है, अर्थात् जेब में पैसे नहीं हैं। अब, अगर ऐसा कोई इन्तज ाम होता कि प्रचलित युग में कमोबेश स्तर के सभी भारतवासियों को खाने के लिए भरपेट आहार, पहनने के लिए उपयुक्त कपड़े और अन्यान्य ज रूरी चीजें उपलब्ध कर पाते, तो इतने बड़े पैमाने का आभ्यन्तरीन बाज ार का सृजन होता, जहाँ उत्पादन करते-करते कल-कारखाने हाँफ उठते। यानी प्रमुख प्रश्न है, आभ्यन्तरीन बाज ार विकसित करना, अर्थात् 100 करोड़ भारतवासियों की खरीद-क्षमता बढ़ाना।

हम जानते हैं कि भारत के 63 प्रतिशत लोग कृषि पर निर्भर हैं। लेकिन भारतीय कृषि की समस्या यह है कि जो लोग बड़ी-बड़ी कृषि-ज मीन के मालिक हैं अधिकांश मामलों में ही, वे लोग खेती-बारी का झमेला अपने कन्धों पर नहीं लेते। जो तमाम वर्गादार, साझा-किसान या अधिया के हिसाब से खेती-बारी की जिम्मेदारी लेते हैं, उन लोगों में इतना सामर्थ्य नहीं होता कि वे लोग उन्नत कृषि-तकनीक का आश्रय लें या प्रान्तिक किसानों की भी यही समस्या है। इसके समानान्तर ही मौजूद हैं, खेत-मजूर, वागला, वेतनयाफ ता या भतुआ वर्ग, जो लोग खेती का जादू जानते हैं, लेकिन ज मीन की मिल्कियत, उन लोगों के पास नहीं है। भारतीय कृषि में यह अर्ध-सामन्ती परिवेश, सबसे बड़ी बाधा है। ग्रामीण अर्थनीति की जड़ता, अगर नहीं तोड़ी गयी, तो 70 प्रतिशत जन-गण का बाज ार ही तैयार नहीं हो सकेगा। इसलिए सबसे पहले ही कृषि-ज मीन की मिल्कियत की समस्या के समाधान के लिए, आमूल भूमि-संस्कार करना बेहद ज रूरी है।

सी.पी.आई.एम. के हिमायती यह कह सकते हैं कि यह कौन सी नयी बात है? पहले युक्तफ्रंट सरकार के ज माने से लेकर सातवीं वामफ्रंट सरकार तक हम लोगों

ने 30 लाख एकड़ जमीन का भूमि-संस्कार किया है। इसके जवाब में सविनय निवेदन है कि 30 लाख तो क्या, तीन एकड़ ज मीन का भी भूमि-संस्कार नहीं हुआ। आमूल भूमि-संस्कार नीति की मुख्य बात है, खेती की जोत-ज मीन उसकी अर्थात् असली किसान के अलावा, अन्य कोई कृषि-ज मीन का मालिक नहीं हो सकता। पश्चिम बंगाल में हुआ यह कि ज मीन की ऊर्ध्व सीमा बाँधकर, किसी व्यक्ति या परिवार की मिल्कियत के अधीन सीलिंग-ऊर्ध्व ज मीन लेकर, भूमिहीन किसान को उसका पट्टा या लीज दी गयी है। इस वजह से एक तरफ, जैसे अकृषक-मालिकाना एकदम से उठ नहीं गया। दूसरी तरफ भूमिहीन कृषकों को भी ज मीन की असली मिल्कियत नहीं मिली।

जो लोग खुद ही खेती करते हैं या करने के इच्छुक हैं, उन लोगों में विभिन्न कृषि-ज मीन समान भाव से बाँट देनी होगी। बीच में कोई एक भी मध्यस्वत्वभोगी नहीं होगा। साथ ही, जहाँ तक संभव हो, किसानों को कृषि-समवाय में खींच लाना होगा। ज मीन की मेंड़ें टूट जाएँगी और कर्षणयोग्य ज मीन का परिमाण बढ़ जाएगा। लगातार खेती के लिए मशीनी खेती के अवसर बढ़ेंगे और पैदावार भी बढ़ जाएगी। समवाय-पद्धति से पोखर-नहर-झीलों का संस्कार करके, सिंचाई की सुविधा बढ़ायी जाएगी। सबसे बड़ी बात यह कि जोत-मालिकों के व्यक्तिगत स्वार्थ या सामर्थ्य के बजाय समवाय चेतना में जिस ज मीन पर, जिस भी फसल की खेती अच्छी होती है, वही खेती की जाएगी। चूँकि अ-कृषक मालिकों को फसल में हिस्सा नहीं देना होगा, फलस्वरूप समस्त सदस्यों में ज रूरत-मुताबिक बंटन करने के बाद भी, समवाय के हाथों अबाधि सरप्लस उत्पादन बच रहेगा। वह सरप्लस फसल बेचकर, समवाय जो रकम उपलब्ध करेगा, उससे वह खुद ही छोटा-मोटा सहायक कारखाना तैयार कर सकेगा, सामाजिक ढाँचा तैयार कर पाएगा। ग्रामीण अर्थनीति का यह पुनर्गठन ही उद्योग-क्षेत्र में ऑक्सीजन भरने का प्रबन्ध करेगा।

विविध विदेशी और बृहद् पूँजी-केन्द्रित आर्थिक प्रतिष्ठान, बृहद् पूँजी और साम्राज्यवादी पूँजी-नियन्त्रित विविध उद्योग तथा सेवा-संस्थाओं का राष्ट्रीयकरण नहीं बल्कि सामाजिकीकरण करना होगा, क्योंकि भारतवासियों की दरिद्रता की वजह, इन लोगों में मुनाफे की अनन्त लालसा ही, सबसे बड़ा कारण है। इन लोगों की तमाम सम्पत्ति और बैंक-बैलेंस जब्त कर लेना चाहिए। इस एक क दम से तमाम काला धन और छिपायी हुई सम्पत्ति एकदम से बरामद की जा सकेगी। नतीजा यह होगा कि राष्ट्र के हाथ में निवेश के लिए प्रचुर अर्थ उपलब्ध होगा। इसी से उद्योग और ढाँचा तैयार होगा। लेकिन यह सब किसी पूँजीपति के मुनाफे की आकांक्षा के आधार पर

नहीं होगा, बल्कि राष्ट्र और जनगण की ज रूरत के आधार पर तैयार होगा। भारत की धरती पर विदेशी निवेश को अवांछित घोषित किया जाना चाहिए। वैसे विदेशी वाणिज्य एकबारगी, छाँटा नहीं जा सकेगा, लेकिन ऐसा व्यापार नितान्त ज रूरी सामग्री या मूलधनी द्रव्यों के आयात के क्षेत्र में करना होगा, किसी किस्म की भोग्य-सामग्री के लिए नहीं।

यह व्यवस्था स्वस्थ तरीके से कार्यान्वित हो, इसके लिए प्रशासनिक व्यवस्था के प्रत्येक स्तर को नये सिरे से सजाना और सुदृढ़ करना होगा। हर अमले, हर अधिकारी को जनता के प्रति दायबद्ध होना होगा और सफाई देने की अनिवार्यता होगी। यानी अमला-नियन्त्रित पंचायतीराज नहीं, असली और सम्पूर्ण राजनैतिक क्षमता, जनता के हाथों में होनी चाहिए। साथ ही अस्त्र प्रतियोगिता बंद करके, फौज को भी उत्पादन और जन-जीवन के परिवर्तन-यज्ञ का सेनानी बनाना होगा। एकमात्र इसी ढंग से सच्चे अर्थों में आज ाद, स्वनिर्भर, उन्नत भारतवर्ष का निर्माण होगा, जिसका हर नागरिक, अपनी कार्य-क्षमता और दक्षता के सबसे उपयुक्त निवेश में, जन-उन्नयन का आत्ममर्यादा सम्पन्न सिपाही होगा।

उन्नयन की इस राह में कोई शॉर्ट-कट नहीं है। संग्राम के ज रिये तिल-तिल अर्जन करना होगा। हाँ, हर क दम पर बाधा-विघ्न आएँगे, लेकिन जनशक्ति के ज्वार में वे सब बह भी जाएँगे। रूस और चीन के जन-जागरण का इतिहास, हमें यही सबक सिखाता है। इसीलिए आज के विकृत, मुनाफा-लोभी लोगों के निर्देश-मुताबिक उन्नयन के तथाकथित उद्योग-आधारित मॉडल के विपरीत, कृषि-उद्योग और सेवा के क्षेत्र में निरन्तर विकास और जनता की आर्थिक-राजनैतिक-सामाजिक-सांस्कृतिक जीवनयात्रा के सुसंगत मनोन्नयन के मॉडल की प्रतिष्ठा करनी होगी, तभी वह असली, स्वाधीन, स्वनिर्भर, उन्नत, नए गणतांत्रिक भारत की प्रतिष्ठा की आधारभूमि बन सकती है।